उपोद्घात

उपक्रममें हिन्दी भाषाकी उत्पत्तिपर कुछ विचार कर लेना उचित जान पड़ता है। छान्दोग्योपनिषद्‌में इन्द्र और विरोचनका एक साथ मिलकर प्रजापतिके पास आत्मज्ञानके लिये जाना और वहाँसे आकर एकको देहात्मवादका प्रचार करना दूसरेको ब्रह्मात्मवादका प्रचार करना इत्यादि आख्यानोंसे यह सिद्ध है कि, आज दो धाराओंमें बिलकुल भिन्न २ रूपसे बहने वाली प्राच्य और पाश्चात्य संस्कृतियोंके मूल पुरुष इन्द्र और विरोचन थे।

"इन्द्रो हैव देवानामभिप्रवव्राज विरोचनोऽसुराणां तौ हासंविदानावेव समित्पाणी प्रजापतिसकाशमाजग्मतुः" तौ हान्वीक्ष्य प्रजापतिरुवाचानुपलभ्यात्मानमननुविद्य व्रजतो यतर एतदुपनिषदो भविष्यन्ति असुराणां ह्येषोपनिषत् प्रेतस्य शरीरं भिक्षया वसनेनालङ्कारेणेति संस्कुर्वन्ति एतेन हि अमुं लोकं जेष्यन्तो मन्यन्ते" (छा० ८।७।२ से ८।८।५ तक)। शास्त्रोंमें असुर देवताओंके ज्येष्ठ भ्राता बताये गये हैं। कश्यप-ऋषिकी पत्नी दिति और अदितिसे दैत्य और आदित्य वंशकी उत्पत्ति बतायी गयी है। इस प्रकार देहात्मवादी और ब्रह्मात्मवादी दो विचार धाराओंको माननेवाले इन्द्र और विरोचनकी सन्तान प्राचीनकालमें एकही जगह रहती थी, एकही भाषा बोलती थी; यह सर्ववादिसम्मत सिद्धान्त है। वर्तमान ऐतिहासिकों ने भी पारिवारिक शब्दोंमें समानता देखकर भाषाके ख्यालसे पृथिवीके अधिकांश मनुष्योंका एक स्थानपर निवास मानलिया है। उस स्थानको एशिया खण्डका मध्य भाग ही बताते हैं। इस विषयमें बहुत विवाद है आज मुझे इस पर कुछ कहना भी नहीं है, अस्तु, उनकी दृष्टिमें संसारकी सभी भाषाएं तीन भागोंमें विभक्त हो सकती हैं। १—आर्य्यभाषा २—शामीभाषा और ३—तूरानीभाषा। पहली आर्य्यभाषामें संस्कृत, प्राकृत, अंग्रेजी, फारसी, यूनानी, लैटिन, आदि भाषाएं आजाती हैं। शामीभाषामें इब्रानी, अरबी, और इब्शी आदि

भाषाएं प्रविष्ट हैं। तूरानी भाषामें चीनी, जापानी, द्राविड़ी, मङ्गोली तुर्की, आदि भाषाओंका सन्निवेश होता है।

आर्य्य भाषाओंकी जननी वैदिक संस्कृतभाषा ही मानी गयी है। उसके बोलने वाले आर्य्य पूर्व कालमें एकही जगह रहते थे और एकही भाषा बोलते थे, वे जब अपने आदिम स्थानको छोड़कर इधर उधर जाने लगे तो उन स्थानोंके जल वायुके अनुसार उनकी भाषायें बदलती गयी।

अत: जो आर्य्य पश्चिम देशोंमें गये उनसे ग्रीक, लैटिन, अंग्रेजी प्रभृति आर्य्यभाषाएं बोलने वाली जातियोंकी वृद्धि हुई। पूर्व देशमें आनेवाले आर्य्योंकी दो शाखाएं हुईं। एक फारसकी ओर गयी दूसरी शाखा हिन्दु-कुशको लाँघकर हिन्दुस्थानमें आयी। पहली शाखाके लोगोंने मीडी (माडी) भाषाके आधार पर फारसी भाषाकी सृष्टिकी। दूसरी शाखाके आर्य लोगोंने अपनी वैदिक संस्कृतका प्रचार किया जिससे वैदिक प्राकृतके द्वारा इस देशमें प्रचलित भिन्न भिन्न आर्य्यभाषाएं निकली हैं। संस्कृतसे प्राकृत द्वार करके निकली हुई आर्य्यभाषाओंमें ही हमारी राष्ट्रभाषा हिन्दी भी है। अब इसमें बहुतसी अपनी सहेली भाषाओंके शब्द भी मिल गये हैं—अनेक आर्य्यभाषाओंके पारिवारिक शब्दोंकी एक तालिका यहाँ दी जाती है, जिससे उन भाषाओंकी जननी संस्कृतभाषा ही हो सकती है, इसका निश्चित प्रमाण मिलता है—

संस्कृत	मीडी	फारसी	युनानी	लैटिन	अंग्रेजी	हिन्दी
पितृ	पतर	पिदर	पाटेर	पेटर	फादर	पिता
मातृ	मतर	मादर	माटेर	मेटर	मदर	माता
भ्रातृ	ब्रतर	ब्रादर	फ्राटर	फ्रेटर	ब्रदर	भाई
दुहितृ	दुग्धर	दुख्तर	थिगाटेर	थिगाटेर	डाटर	धी

इस तालिकासे ज्ञात हो रहा है कि एक ही भाषाके शब्दोंने किस प्रकार देशके जलवायुके भेदसे भिन्न भिन्न रूप धारण कर लिए हैं। यदि कोई इन देशोंके अन्यान्य शब्दोंपर संयम करे तो एक पुस्तकाकार सूची

न सकती है—जैसे संस्कृतके 'गौ' अंग्रेजीमें 'काउ' हो गया। 'छाग' गोट' हो गया है इत्यादि।

संस्कृत और वैदिक प्राकृत

आर्योंकी पहली भाषा वैदिक संस्कृत है, जिसे देववाणी कहते हैं।... मालूम होता है कि, इसका संस्कृत नाम इसलिये पड़ा कि उन दिनोंमें भी ...ठ प्राकृत अनपढ़ लोग थे ही, जो प्रकृति (संस्कृत) से उत्पन्न प्राकृत भाषा बोलते थे। उस भाषाकी अपेक्षा यह भाषा अधिक संस्कारसम्पन्न थी। अच्छे पढ़े लिखे (संस्कारसम्पन्न) लोग इसका व्यवहार करते थे। इसी कारण यह देववाणी कही गयी। इसकी लिपि भी देवनागरी (ब्राह्मी) लिपि कहाती थी। विदेशियोंका यह कहना कि लिखनेकी प्रथा पाणिनिके समयमें ...री दुःसाहसमात्र है। जब कि, वेदोंमें "क्षुरस्त्रजरच्छन्दः" (लेखनीकी ...ोकको तोड़ देनेवाला छन्द) "प्रथमं पटलमुद्वर्त्य द्वितीयं पटलमुद्वर्तयति" (पहला पन्ना उलटकर दूसरा पन्ना उलटता है) इत्यादि वाक्य पाये जाते हैं। इससे ज्ञात होता है कि, वेदकालमें लिखनेकी प्रथा विद्यमान थी। उसके लिये देवनागरी (ब्राह्मी) लिपिका ही प्रयोग होता था। ...सका स्वरूप भले कोई दूसरा था। संस्कृत बोल चालकी भाषा थी यह तो 'प्रत्यये भाषायां नित्यम्' 'भाषायां सदवसश्रुवः,' 'प्रथमायाश्च द्विवचने भाषायाम्।' इत्यादि कात्यायनके वार्तिक और पाणिनिके सूत्रोंसे भी स्पष्ट है

उस संस्कृत भाषाको स्त्री बालक और अनपढ़ लोग विकृतरूपमें अपनी सस्कृत प्रकृतिके अनुसार ही बोलते थे इसलिये वह प्राकृत भाषा कहाती थी, जिसे हम यहाँ वैदिक प्राकृत कह सकते हैं। 'प्राकृतका उत्पत्तिस्थान संस्कृत ही है' अपनी प्रकृति सस्कृतसे जो उत्पन्न हो उसे प्राकृत कहते हैं।' 'प्राकृतकी विभक्तियाँ सस्कृतके ही समान होती हैं।' इत्यादि अभिप्राय प्राकृतके प्राचीन वैयाकरणोंका भी है उसी प्राकृतकी विकृति होते होते आगे चलकर लौकिक प्राकृत, पाली, अपभ्रंश आदि नाम पड़ने गये। परन्तु संस्कृत विकृत नहीं हो सकी। इसका श्रेय इन्द्र, चन्द्र, शाकटायन, आपिशलि और पाणिनि प्रभृति महावैयाकरणोंको

देना चाहिये जिन लोगोंने उसपाणिनी भाषाको विस्तृत व्याकरण बनाकर अति सुश्रृंखला बद्ध कर दिया है। यहभी उन्हीं महावैयाकरणोंकी कृपाका फल है कि, आजतकके सामाजिक, राजनीतिक सभी उथलपुथलोंको केवल संस्कृत भाषाके अध्ययनसे ही समझ सकते हैं। और यह संस्कृत भाषा आज भी अपने उसी अविकृत रूपमें पूर्ण मर्यादाके साथ चली आ रही है। आज भी कोई अपने विचारोंको शाश्वतिक रूप देना चाहता है तो वह संस्कृतमें ही ग्रन्थ लिखता है। संस्कृतके अतिरिक्त अन्यान्य भाषाओंका कौन ठिकाना है, यह कौन कह सकता है कि, आज वह जिस रूपमें है, सौ वर्षोंके बाद भी उसी रूपमें रहेगी। संस्कृतको तो दावेके साथ कहा जा सकता है कि, यह पाँच हजार वर्ष पहले जिस रूपमें थी आज भी उसी रूपमें है। और आगे भी उसी रूपमें रहेगी।

अस्तु जो पहले वैदिक प्राकृत थी वही कुछ दिनके बाद कालक्रमसे लौकिक प्राकृत हुई जिसका व्याकरण वररुचिने बनाया है। बौद्धकालमें यही लौकिक प्राकृत पाली होगयी और उसका खूब प्रचार हुआ। बौद्ध लोगोंने अपने धर्मके प्रचारके लिये पालीभाषाका ही आश्रय लिया। यद्यपि उनके दिग्गज विद्वानोंने उन दिनोंमें भी संस्कृत-भाषामें अपने स्थिर साहित्यको निबद्ध किया है। वह पाली भी आगे चलकर स्थिर न रह सकी, उसकी तीन शाखाएं होगयीं—मागधी, शौरसेनी और महाराष्ट्री। जैनोंके तीर्थङ्करोंने अर्द्धमागधीमें अपने धर्मका प्रचार किया जो संयुक्त प्रान्त और बिहारके बीच बोली जाती थी। आगे चलकर यह पाली भी अपभ्रंश नामसे पुकारी जाने लगी। इसका व्याकरण हेमचन्द्रने बनाया है, जिन्होंने 'अपभ्रंश' (बिगड़ी हुई भाषा) नाम लिखा है। हमारी हिन्दी इसी अपभ्रंशकी उत्तराधिकारिणी होकर आज इस रूपमें खड़ी है।

इस प्रकार वैदिक संस्कृतसे चली हुई हमारी भाषा शालिग्रामकी बटियाकी तरह रगड़ खाते खाते आज सुडौल और मनोहर रूपमें हिन्दी बनकर बैठी है। यह हमारी आजकी राष्ट्रभाषा हिन्दी, प्राकृत रूपमें

आठवीं शताब्दी तक और अपभ्रंश रूपमें बारहवीं शताब्दी तक रही। संस्कृतके नाटकोंमें तथा आलङ्कारिक काव्यप्रकाश प्रभृति ग्रन्थोंमें प्राकृत अपभ्रंश इत्यादि भाषाओंकी कविताएं तथा गद्यांश पाये जाते हैं। वररुचिके प्राकृतप्रकाशमें पैशाची आदि भाषाओंका भी उल्लेख है। हेमचन्द्रके प्राकृत व्याकरणमें हिन्दीकी पुरातन कविताओंका उल्लेख है।

शिवसिंहसरोजमें सम्वत् ७७० में भोजके पूर्वपुरुष राजा मानके सभासद 'पुष्प' नामक कविका दोहोंमें एक आलङ्कारिक ग्रन्थ लिखा बताया गया है। अस्तु, उस समयमें 'गाथा' शब्दसे प्राकृत और 'दोहा' शब्दसे अपभ्रंशका बोध हुआ करता था। उस समय धर्म, नीति, वीरता प्रभृति सभी प्रकारकी रचनाएं दोहोंमें ही पायी जाती थीं। हिन्दीके इतिहासज्ञोंने हिन्दीके आदि कालको वीर गाथा काल (१०००से १४०० तक) बादको भक्ति काल (१४०० से १६०० तक) रीतिकाल (१६०० से १८०० तक) आधुनिक गद्य पद्य काल (१८०० से २००० तक) माना है।

आदिकालमें हिन्दीके सबसे प्रथम कवि चन्दबरदाई माने गये हैं। जिन्होंने 'पृथ्वीराज रासो' लिखा है। उसी कालमें महोवेके जगनिक कविने भी 'आल्हा' की रचनाकी है जो बुन्देलखण्डी भाषामें है। भक्ति कालमें ब्रजभाषामें रची कविताए पाई जाती हे। रामानुजाचार्य, रामानन्दाचार्य, कबीरदास प्रभृति इस कालके कवि हैं। मीराबाई भी उसी कालमें हैं पर उनकी भाषा कहीं कहीं मेवाड़ी भी है। बाबा नानक के 'आदि ग्रन्थ' (ग्रन्थ साहब) की भी भाषा पुरानी हिन्दी है।

सन् १५४० में शेरशाहके यहाँ मलिक मुहम्मद जायसीने पद्मावत (नामक ग्रन्थ) लिखा है। यह अच्छा ऐतिहासिक रहस्यवादका ग्रन्थ है। इसकी भाषा अवधी है। इसी समय वल्लभाचार्यने भी अपने मतका प्रचार ब्रजभाषाके द्वारा किया और कराया है। जिनके आठ शिष्योंने ब्रजभाषामें ही कविताएं की हैं। सूरदास भी इन्हींके शिष्योंमें थे जिनका 'सूरसागर' सवा लाखका ग्रन्थ प्रसिद्ध ही है।

इसी समय (१५५६से १६०५ई० तक) अकबरके द्वारा ब्रजभाषाकी उन्नति हुई, और उसके दरबारी रहीम, फैजी, फहीम प्रभृति मुसलमान

कवि तथा टोडरमल, बीरबल, नरहरि प्रभृति हिन्दू कवि ब्रजभाषामें ही कविताएं करने लगे।

हिन्दीका मध्यकाल १६०० से १८०० तक माना जासकता है। उसीमें गोसाईं तुलसीदास हैं, जिनका काल १५८९ से १६८० तक है। उन्होंने ब्रजभाषा एवं अवधीमें अपनी कविताएं की हैं। उनका रामचरित मानस अवधी भाषाका प्रसिद्ध ग्रन्थ है। इस कालमें दूसरे प्रसिद्ध कवि केशवदास, बिहारीलाल, भूषण, मतिराम, नाभादास प्रभृति भी हुए। केशवदासकी रचना कठिन होती थी। रामचन्द्रिका, रसिकप्रिया, कविप्रिया प्रभृति उनके ग्रन्थ हैं। बिहारीलालकी बिहारीसतसई प्रसिद्ध ही है। भूषणका शिवराज, शिवाबावनी आदि ग्रन्थ प्रसिद्ध हैं। भूषण चिन्तामणि और मतिराम दो भाई थे। ये भी भाषा साहित्यके आचार्य थे। नाभादासका भक्तमाल प्रसिद्ध ग्रन्थ है। उस समय भिखारीदास ब्रजवासीदास सुरतिमिश्र प्रभृति हिन्दीके अच्छे लेखकोंमें थे।

आधुनिक काल १८०० से २००० ईसवी तक है। इसकालमें हिन्दी साहित्यकी अच्छी उन्नति हुई है। इतिहास, भूगोल, व्याकरण आदि ग्रन्थ के अतिरिक्त समाचार पत्र और मासिक पत्र निकलने लगे, नाटक उपन्यास प्रभृति मौलिक तथा अनुवाद ग्रन्थ लिखे जाने लगे। छापाखानोंके द्वारा हिन्दी संसारका क्षेत्र बहुत विस्तृत होगया। १८०४ में लल्लूजी लालने प्रेमसागर लिखा। इसाईलोग भी हिन्दीमें अपनी धार्मिकपुस्तकें छपाकर बांटने लगे। शिक्षाविभागमें राजा शिवप्रसाद प्रभृति हिन्दीके लेखकोंने पुस्तकें लिखना प्रारम्भ किया। राजा लक्ष्मणसिंह, पं० अम्बिकादत्तव्यास, पं० गोविन्दनारायणजी, भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्रजी इसी समयके रत्नोंमें हुए। भारतेन्दुजी तो आधुनिक हिन्दीके जन्मदाता ही माने जाते हैं। इनके सत्यहरिश्चन्द्र, मुद्राराक्षसका अनुवाद प्रभृति बहुतसे ग्रन्थ हैं।

वर्तमान समयमें भी जगन्नाथदास रत्नाकर, लाला भगवानदीन, जयशङ्करप्रसाद, पं० महावीरप्रसाद द्विवेदी प्रभृति हिन्दीके अच्छे २ विद्वान होगये हैं, जिन्होंने हिन्दीकी सेवा प्राणपणसे की है।

आजकल एक बातकी त्रुटि पायी जाती है कि, राष्ट्रके भावके

व्यक्त करनेवाली कविताओंका कोई ऐसा विशाल ग्रन्थ नहीं बन रहा है जिसमें वर्तमान भारतीय सूक्ष्मात्माका विस्तृत विवेचन हो।

हिन्दी शब्द पर भी आज बहुत विवाद है। मेरी सम्मतिमें तो हिन्दी शब्द हिन्दु शब्दके आधारपर विदेशियोंने रखा है। प्राचीन ग्रन्थोंमें प्राकृत और भाषा ये ही दो शब्द पाये जाते हैं 'जो प्राकृत कवि परम सयाने, भाषामय जेहि कवित बखाने' 'भाषानिबद्धमतिमञ्जुलमातनोति' 'भाषा भनिति भोर मति मोरी, हसिबे जोग हसे जनि खोरी' इत्यादि बहुतोंने 'प्राकृत' 'भाषा' अपभ्रंश इत्यादि शब्दोंका प्रयोग किया है। आगे जाकर 'हिन्दवी' 'हिन्दुई' 'हिन्दी भाषा' 'हिन्दुस्तानी' 'नागरी' इत्यादि नाम भी होगये हैं। अब इसे 'हिन्दुस्तानी' या 'राष्ट्र भाषा' कहना चाहिये। हिन्दु शब्द भी अब हिन्दुस्थानके रहने वाले सभी भारतीयमात्र इसाई, मुसल्मान, आर्य, सनातनी, जैन, बौद्ध, सिक्ख सभीके लिये प्रयुक्त हो तो अच्छा है। हिन्दुस्थानके बाहर वाले ऐसा ही करते हैं। भारतवर्षके बाहरके देशोंमें कोई भी यहाँसे जाता है, चाहे वह मुसल्मान हो या इसाई हो, बाहरवाले उसे यही कहते हैं कि हिन्दुस्थानसे एक हिन्दु आये हुए हैं। रह गयी लिपिकी बात इसके विषयमें मेरी सम्मति यह है कि, नागरी लिपिही हिन्दीके लिये समुचित और वैज्ञानिक है। यों तो फारसी लिपिमें या रोमन लिपिमें भी लिखीजा सकती है और आज कुछ अंश में वह आवश्यक भी प्रतीत होता है। पर यदि सूक्ष्म विचारसे देखा जाय तो सारे संसारके लिये नागरी लिपि ही आवश्यक और उपयोगी मालूम होती है, क्योंकि, जो बोलना वही लिखना यह गुण देवनागरी लिपिमें ही है और किसी दूसरी लिपिमें यह अद्भुत गुण नहीं है।

हिन्दीमें संस्कृत प्रभृति बहुतसी भाषाओंसे शब्द आकर मिल गये हैं, जिनका संक्षिप्त परिचय यहाँ देदिया जाता है—संस्कृतसे जो शब्द आये हैं उनका नाम हिन्दीमें तत्सम और तद्भव कहा जाता है। अन्य शब्दोंके दो भेद हैं देशी और विदेशी। तत्सम और तद्भव शब्दोंके कुछ नमूने देदिये जाते हैं—

तत्सम—आज्ञा चणक महीष मेष वत्स बलीवर्द राजा राजपुत्र अग्नि स्वामी कर्ण हस्त पक्ष वायु अक्षर सर्व विवाह लक्ष्मणपुर लवपुर गोरक्षपुर

तद्भव—आन चना भैंसा भेड़ा बच्छा बैल राणा राजपूत आग साँई कान हाथ पंख (पाख) बयार आखर सब ब्याह लखनऊ लाहौर गोरखपुर

देशी शब्द—जिन शब्दोंके नाम हिन्दीकी प्रकृति देवीने ही अर्थात् यहाँ के निवासियोंने अपने आप चीजोंके आकार प्रकार देख कर गढ़ लिया है। जैसे—चटपट, खटपट, ढोंग, तेंदुआ, खिड़की, टेस, ठोकर कसैली इत्यादि

विदेशी शब्द—अरबी, फारसी, तुर्की पोर्चुगीज़ अंग्रेजी प्रभृति भाषाओंसे जो शब्द हिन्दीमें आये हैं, ये विदेशी कहे जाते हैं। कुछ शब्द तो ऐसे हैं कि जिनका पर्य्याय हिन्दी शब्द ही नहीं है। जैसे कफन, शकुनतकिया, पैवन इत्यादि।

अरबी—अदालत, इम्तहान, एतराज़, औरत, तनख्वाह, तारीख मुकद्दमा, सिफारिश, हाल इत्यादि—

फारसी—आदमी, उम्मेदवार, कमर, खर्च, गुलाब, चश्मा, [illegible] चापलूस, दूकान, दाग, मोजा इत्यादि।

तुर्की—बोतल, चमक, तगमा, तोप, लाश, इत्यादि।

पोर्चुगीज—कमरा, नीलाम, पादरी इत्यादि।

अंग्रेजी—अपील, इञ्च, कलक्टर, कमेटी, कोट, टिकट, फीस, फुट, मील, समन, स्कूल प्रभृति। अब अंग्रेजी शब्दोंका तो खूब भरमार हो रहा है। आजकलके हमारे अंग्रेजी पढ़े लिखे लड़के पिताजी माताजीकी जगह फादर मदरका ही प्रयोग करते हैं। अंग्रेजी राज्य के सौ दो सौ वर्षोंके बाद ऐतिहासिकोंको यह भ्रम पैदा हो सकेगा कि, इनके पुरखे अंग्रेजसे शुद्ध होकर हिन्दुस्तानी हुए हैं। मेरी सम्मतिमें अनावश्यक विदेशी शब्दोंकी भरमार करना ठीक नहीं है। जहां तक हो सके अपनी संस्कृतिके परिचायक हिन्दी संस्कृतके ही शब्दोंका प्रयोग हो तो अच्छा है

श्री गोपाल शास्त्री।

विद्वानोंकी सम्मति ।

हिन्दी-साहित्य-सम्मेलनके राष्ट्रभाषा परिषद्के स्वागताध्यक्ष,
भारतमित्र तथा श्रीकृष्णसन्देशके भूतपूर्व सम्पादक,
श्रीमान् माननीय पं० लक्ष्मणनारायण
गर्दे महोदय लिखते हैं—

संस्कृतके विद्वान् हिन्दीके भी विद्वान् हों, यह हिन्दीके लिये
था हिन्दी जिनकी मातृभाषा और राष्ट्रभाषा है उनके लिये भी
रम-सौभाग्यका विषय है। कारण, इन्हींके द्वारा हिन्दीकी
कृति, मूल प्रकृति और संस्कृतिका मौलिक ज्ञान हिन्दीमें आ
कता है। ज्ञान विज्ञानकी कुछ नयी बातें और कुछ नये शब्द
ो चाहे जिस भाषासे हिन्दीमें आ सकते हैं, पर भाषातत्व और
ाष्ट्रसंस्कृतिकी दृष्टिसे हिन्दीको संवर्द्धित और परिपुष्ट करना
ंस्कृतका ही काम है; क्योंकि संस्कृत ही हिन्दीकी मूल प्रकृति
। हिन्दी उसका वर्त्तमान रूप है और संस्कृत उसका सुदृढ़
ऐतिहासिक और सांस्कृतिक आधार।

'हिन्दी दीपिका' हिन्दी भाषाका व्याकरण है। संस्कृतके
प्रसिद्ध विद्वान् पं० श्रीगोपाल शास्त्री, दर्शनकेशरी इसके
निर्माता हैं जो हिन्दी भाषाकी वर्तमान गतिका भी पूरा परिचय

रखते हैं। पुस्तकारम्भमें ही आपने बहुत ही सुलझे हुए ढंग विभक्ति प्रत्ययादि विषयोंकी जो मीमांसा की है वह संक्षि होनेपर भी विशुद्ध और पूर्ण है। गया—गई, आया—आ आदि अशुद्ध प्रयोग जो आजकल हिन्दीमें निरंकुश हो प्रचलित हो रहे हैं उन पर भी आपने व्याकरणके सुनिश्चि नियमका अंकुश रखा है। ऐसे ऐसे सभी विषयोंमें नियमों सुनिश्चित करनेका काम उत्तरदायित्व और योग्यताके सा हुआ है।

व्याकरण संस्कृतके विद्यार्थियोंके लिये लिखा गया है इसलिये जहाँ-वहाँ संस्कृत व्याकरणका भी, हिन्दी रूपोंके सा सम्बन्ध दिखाया गया है जो आवश्यक ही था। इससे संस्कृ विद्यार्थियोंके लिये यह व्याकरण सुगम और साथ ही मनोरञ्ज भी होगा। केवल हिन्दीके विद्यार्थियोंके लिये भी इससे य सुविधा हो सकती है कि वे हिन्दी व्याकरणके नियमोंके सा साथ संस्कृतके भी उन नियमोंको जान सकेंगे जिन्हें जानन हिन्दीको ही अधिक गहराईमें जानना है।

राष्ट्रभाषा होनेके नाते हिन्दीका संस्कृत मूलक व्याकरण अधिक सुगम और उपयोगी होगा, इसमें कोई सन्देह नहीं क्योंकि द्राविडी भाषाओंको छोड़कर और सभी प्रान्तिक भाषा संस्कृत मूलक हैं।

यह पहला ही हिन्दी व्याकरण है जो संस्कृतके विद्या पढेंगे। इसके द्वारा संस्कृतके विद्यार्थी हिन्दीमें प्रवेश करें

संस्कृत-हिन्दीका जो अविच्छिन्न सम्बन्ध है वह इससे दृढ और संवर्द्धित होगा जिसका होना राष्ट्रशक्तिके सुदृढ़ और संवर्द्धित होनेके लिये परम आवश्यक है। इसी प्रशस्त पथको यह दीपिका प्रकाशित करती है और इसके लिये पं० श्रीगोपाल शास्त्रीजी हम सबके सहृदय धन्यवाद पात्र हैं।

विनीत—
श्रीलक्ष्मणनारायण गर्दे।

गवर्नमेंट संस्कृत कालेज काशीके हिन्दी विभागके प्रोफेसर, एम० ए०, व्याकरणाचार्य्य, साहित्यरत्न आदि विविधोपाधिविभूषित श्रीमान् पं० करुणापति त्रिपाठी महोदय लिखते हैं—

श्रीशो वन्दे।

मुझे काशीके सुप्रसिद्ध विद्वान् महामहोपाध्याय श्रीमान् पं० गोपालशास्त्री दर्शनकेशरीजी द्वारा लिखित हिन्दी-दीपिका देखनेका सौभाग्य प्राप्त हुआ। इस पुस्तकको पढ़कर एवं उसकी विषय-विवेचना पद्धतिको देखकर बड़ी प्रसन्नता हुई। यद्यपि इस ग्रन्थमें कुछ ऐसे स्थल हैं जिनके सम्बन्धमें अभी तक विद्वानोंमें ऐकमत्य नहीं है, विवाद ही हो रहा है, तथापि उस विषयमें लेखक महोदयका अपना निर्णय साधार विशेष स्थान रखता है।

अस्तु, जिनके लिये—संस्कृत पढ़ने वाले विद्यार्थियोंके लिये तथा थोड़ेमें हिन्दी व्याकरणके पर्याप्तज्ञान प्राप्त करलेनेके अभिलाषी अन्य भाषाभाषी प्रान्तोंके हिन्दी परीक्षार्थियोंके लिये—यह ग्रन्थ लिखा गया है, उनकी सामाजिक एवं धार्मिक संस्कृतिकी मूल जननी संस्कृत भाषाके साथ अधिक सम्बद्ध होनेसे और उनकी परम्पराके अनुकूल होनेसे तथा साथही साथ सरल और रोचक शैलीमें लिखित होनेसे यह उन विद्यार्थियोंके लिये हिन्दी पढ़नेमें, हिन्दी लिखनेमें—जो हिन्दी आज राष्ट्रभाषा होने जा रही है

या यह कहना चाहिये कि जो स्वतः सिद्ध राष्ट्रभाषा है—यह ग्रन्थ अतीव उपयोगी होगा।

कांग्रेस सरकारने राजकीय पाठशाला काशीकी प्रथमा परीक्षार्थियोंके लिये सन् १९४० से जैसे हिन्दी-व्याकरणकी आवश्यकता बताई है, वे सभी आवश्यकताएँ इससे पूर्ण हो जाती हैं।

हमें पूर्ण विश्वास है कि थोड़े समय एवं परिश्रममें हिन्दी-व्याकरणके आवश्यक ज्ञानप्राप्त करनेके लिये संस्कृत के हिन्दी के अंग्रेजी के तथा अहिन्दी भाषाभाषी प्रान्तोंके विद्यार्थियोंको इस दीपिकासें अवश्य लाभ होगा। ऐसी पुस्तक यदि परीक्षाओंकी सेलेक्ट कमेटियों द्वारा पाठ्यपुस्तकोंमें निर्दिष्ट करदी जाय तो परीक्षार्थियोंके बहुमूल्य समयकी बचतके साथ अध्ययनमें अधिक उपकार होगा।

२८-११-३९.

औरंगाबाद, काशी।

श्री करुणापति त्रिपाठी।

(एम्. ए., व्याकरणाचार्य, साहित्यशास्त्री)

मेरे दो शब्द।

मुझे बहुत दिनोंसे संस्कृतसाहित्यके विद्यार्थियोंमें हिन्दी भाषाके ज्ञानका अभाव खटक रहा था। इन विद्यार्थियोंमें हिन्दी भाषाका ज्ञान साहित्यिक दृष्टिसे नहीं तो कमसे कम हिन्दू और हिन्दुस्थानकी दृष्टिसे अवश्य ही अपेक्षित था।

आज कांग्रेस गवर्नमेंटने संस्कृतकी पाठ्यप्रणालीमें सुधार करते हुए प्रथमा परीक्षा वाले विद्यार्थियोंके लिये हिन्दीव्याकरणका जानना अनिवार्य रखकर एक बहुत बड़े अभावकी पूर्ति की है, इसके लिये उसे जितना धन्यवाद दिया जाय थोड़ा ही है।

यह पुस्तक प्रसिद्ध दार्शनिक विद्वान् महामहोपाध्याय श्रीमान् पं० गोपालशास्त्री दर्शनकेशरीके राष्ट्रभाषाभूषणका द्वितीय संशोधित संस्करण है, जो राजकीय संस्कृत पाठशाला काशीकी प्रथमापरीक्षार्थियोंके लिये सन् १९४० के नवीन नियमानुसार बनायी गयी है।

श्रीमान् शास्त्रीजीने समय न रहते हुए भी—मेरी प्रार्थनाको स्वीकार कर इस संस्करणमें जो अपना अमूल्य समय दिया है, उसके लिये हम उनके विशेष कृतज्ञ हैं और साथही हम द्विजेन्द्र श्रीमान् पं० सरयूप्रसादजी शास्त्रीके भी कम कृतज्ञ नहीं हैं, जिन्होंने प्रूफ संशोधन आदिमें सहायता देकर इस महान् कार्यमें अपना हाथ बटाया है।

१-१२-३९.
शारदा भवन, काशी।

श्री गौरीनाथ पाठक।
(प्रकाशक)

विषय-सूची।

विषय— पृष्ठ—

हिन्दीदीपिका ।

विषय-प्रवेश ।

—※—

वन्दे मातरमित्युक्त्वा गिरां देवीं प्रणम्य च ।
राष्ट्रभाषां परिष्कुर्वे हिन्दीदीपिकयाऽनया ॥

आज कल हिन्दीसंसारमें बड़ी गड़बड़ी मच रही है ; "मुण्डे मुण्डे मतिर्भिन्ना" की कहावत चरितार्थ हो रही है। कोई विभक्तियोंको शब्दोंसे अलग लिखता है तो, कोई साथ ही लिखता है। कोई "गया" में "य" लिखकर "गयी" मे "ई" लिखता है ? कोई संस्कृतके शब्दोंकी भरमार करता है ; दूसरे फारसी शब्दोंके पुछल्ले लगाते हैं। एक अनुस्वारके पक्षपाती हैं तो, अन्य चन्द्रबिन्दुके। इसी प्रकार किसी लेखमें देखिये तो, विरामचिन्ह अधिक मात्रामे प्रयुक्त हैं और किसीके लेखमें सिवा पूर्ण विरामके दूसरे चिन्होंका दर्शन ही नहीं होता। जो शब्द एक जगह स्त्रीलिङ्गमे प्रयुक्त हो रहा है, वही दूसरी जगह पुँलिङ्गमें किया जा रहा है। एक तरफसे

'भाषा सरल होनी चाहिये'की आवाज आ रही है तो, दूसरे कहते हैं कि, 'नहीं, कठिन होनी चाहिये।' किसीकी राय है कि, 'व्याकरणके पीछे ज्यादा नहीं पड़े रहना चाहिये' तो, दूसरे कहते हैं कि, 'नहीं, व्याकरणकी शृङ्खलासे भाषाको ऐसे जकड़ना चाहिये कि, यह इधर उधर बहकने न पावे' इत्यादि। अब ऐसी हालतमें क्या करना चाहिये? मेरे विचारमें तो, जबतक हिन्दीकी कोई सर्वसम्मत शैली नियत नहीं होती तबतक यह गड़बड़ी रहेगी ही। परन्तु सौभाग्यकी बात है कि, हिन्दी-साहित्यसम्मेलन अब इस ओर ध्यान दे रहा है। लिङ्ग-निर्णयार्थ उसने एक कमेटी स्थापितकी है, आशा है कि उससे हिन्दी संसारको विशेष लाभ होगा। जबतक कमेटी कोई निर्णय नहीं देती, तबतक हिन्दीके सुयोग्य विद्वानोंको पुस्तक या लेखद्वारा इन विषयोंपर स्वतन्त्र विचार प्रकट करना उचित है।

विभक्ति-प्रयोगमें मतभेद।

हिन्दी भाषाके दुर्भाग्यसे अभीं भी हिन्दीकी विभक्तियोंके प्रयोगमें दो मत चला ही जाता है। एक मत है कि, विभक्तियाँ प्रत्यय नहीं हैं किन्तु 'लग्न', 'कच्च', सन, कृते, और मध्य शब्दों से घिसकर ने, को, से, का और में बन गयी हैं। अतः इनका प्रयोग शब्दोंसे अलग ही होना चाहिये। दूसरा मत है कि,

यह बात नहीं है। यदि उपर्युक्त शब्दोंका रूपान्तर ये विभक्तियाँ होतीं तो इन शब्दोंका प्रयोग तथा इनके परिवर्तित भिन्न-भिन्न रूपोंका प्रयोग भी हिन्दी शब्दोंके साथ होता आता। पर चन्दवरदायीसे लेकर किसी भी प्राचीन कविकी रचनामें इन शब्दोंके अङ्ग-भङ्ग होते हुए भिन्न-भिन्न विकृतरूपोंका क्रमशः प्रयोग नहीं दीखता है। प्रत्युत उन्हीं कवियोंकी रचनाओंमें 'ने, को, से, का और में' विभक्तियोंका प्रयोग इन्हीं शब्दोंके साथ दीखता है। 'प्यारे सपने माझमें मरी तेरी बात' यहाँ 'मध्य' के अपभ्रंश 'माझ' के साथ 'में' आया है, हिन्दीमें बोला जाता है कि वह बड़ी 'लगनसे' काम करते हैं। यहां लग्नके अपभ्रंश 'लगन' के साथ 'से' का प्रयोग हो रहा है। गुजरात और महाराष्ट्रमें अभीभी कन्याना लग्न, मुलीचे लग्न, आदि ऐसा शुद्ध 'लग्न' शब्दका ही प्रयोग होता है, 'बहुरि शक्रसम विनवौं तेही' 'शक्रसम' माने 'शक्रके समान' यहाँ षष्ठी विभक्तिके लुप्त 'के' के साथ 'सम' शब्दका सादृश्य अर्थमें 'कह्यो सम खान ततारह' ततार खांके सामने कहा। यहा षष्ठी विभक्ति 'ह' के साथ 'सम' शब्दका सम्मुख अर्थमें प्रयोग हुआ है। 'कक्ष' का अपभ्रंश 'काँख' अभीं तक प्रयुक्त होता है तो कक्षका 'को' कैसे हो सकता है। बङ्ग भाषामें अभीं भी 'आमार काछे' ऐसा प्रयोग होता है। इत्यादि उदाहरणोंसे प्रतीत होता है कि, इन शब्दोंसे ये विभक्तियां नहीं बनी हैं, किन्तु हिन्दी भाषाकी आदि जननी संस्कृत भाषाकी ही विभ -

क्रियाँ प्राकृत भाषा द्वारा बदलती हुई हिन्दीमें आकर इन रूपोंमें परिवर्तित हो गयी हैं। हिन्दीका मूलरूप भी प्राकृतमय तथा अपभ्रंशमय ही था। इधर आकर सुधरते सुधरते यह रूप हो गया है। यह बात हिन्दीके विकाशक्रमको जानने वाले सभी विद्वान् जानते हैं। गोसाईं तुलसीदासजीने तो हिन्दीके लिये 'प्राकृत' और 'भाषा' येही दो नाम प्रयुक्त किये हैं,'जे प्राकृत कवि परम सयाने, भाषामय जिनचरित बखाने' में तो समझता हूँ कि हिन्दी 'हिन्दवी' 'हिन्दुस्तानी' इत्यादि नाम विदेशियोंके सम्बन्धके ही कारण पड़े हैं। अतः इन विभक्तियोंको प्राकृतके समान शब्दोंके साथ मिलाकर ही लिखना चाहिये किसी अवस्थामें भी अलग नहीं लिखना चाहिये। इनका संस्कृतसे हिन्दीमें इस रूपमें परिवर्तन किस प्रकार हुआ है। यह संक्षेपसे दिखायाजाता है।

संस्कृतकी तृतीया विभक्ति कविना, देवेन इत्यादिमें 'ना' और 'इन' को "तृतीयादीनां एत्वं एकत्वे स्त्रियाम्" इस प्राकृत-प्रकाशके सूत्रके बलसे 'ए' होजाने के कारण 'ने' बन गया है। प्राचीन कवियोंने इस 'ने' का प्रयोग भी कर्मवाच्यमें तृतीया विभक्तिके स्थानमें ही किया है। अमीर खुसरो (मृत्यु सन् १३२५) की एक पहेली ज्योंकी त्यों दी जाती है।

"तरवरसे एक तिरिया उतरी उसने खूब रिझाया।
बापका उसके नाम जो पूछा आधा नाम बताया।
आधा नाम पितापर वाका बूझ पहेली गोरी।
अमीर खुसरो यों कहे अपने नाम निबोरी।

यों ही संस्कृतकी द्वितीया विभक्ति 'अम्' और 'शस्' के योगमें "तुह्मा ह्मेहि नं आकं" "सब्बतो को" प्रभृति कात्यायन-सूत्रोंद्वारा आदेश होकर 'अह्माकं पस्ससि' 'सब्बको' 'यको' 'सको' इत्यादि प्रयोग बनते हैं हिन्दीकी मूलप्रकृति प्राकृतके ये ही रूप हिन्दीमें आकर हमको, हमें, तुमको, तुम्हें, (अवतो–तुमको, तुम्हे) हो गये हैं। और इन्हींके अनुकरणपर द्वितीया विभक्तिका चिन्ह 'का' सभी शब्दोंके साथ प्रयुक्त होने लगा।

इसी प्रकार संस्कृतकी पञ्चमीके रूप जैसे रामात् सर्वस्मात् इत्यादि होते हैं, प्राकृतमें पञ्चमी इत्यादि विभक्तिके चिन्ह 'सुन्तो' 'हिन्तो' इत्यादि होते हैं। चन्दकविने अपनी हिन्दीमें पञ्चमीकी जगह 'कहत सिद्धि किहि पुरहूतो' 'केतिक दूर अजमेर हूँत'आदि वाक्योंमें हूँतो, हूँत इत्यादि प्रयोग किये हैं। इन्ही विभक्तियोंके 'सुन्तो' रूपसे सुं, सों, सें, तें, से, ते होते हुए 'से' यह पञ्चमी का चिन्ह बन गया है। देहली, मेरठ प्रभृति देशोंमें 'हमसेती', 'इससेती' प्राचीन हिन्दी, और बिहारमें 'कारण ते कार्य्य' इत्यादि प्रयोग पञ्चमीके स्थानमें पाये जाते हैं।

इसी तरह संस्कृतकी षष्ठी विभक्तिके रूप देवस्य, देवानाम् इत्यादि के 'स्य' (देवस्य) और 'नाम्' (देवानां) आर्ष प्राकृतमें 'स्स' और 'णं' रूपमें प्रचलित थे। बाद अपभ्रंश प्राकृतमें आकर स, हं हुं हि और णो, नो न आदि होते हुए हिन्दीमें 'स' 'सु' और 'न' तक पहुंच गये। जैसे-'जासु कृपा सो दयाल' 'महिमा जासु जान नगराउ' 'तासु बात तुम प्राण

अधारा' 'कविन दास कविचन्द' इत्यादि प्रयोग दीखते हैं। और प्राकृतमें 'सम्यन्धिनः केरतणौ' इस सूत्रसमूहसे सम्यन्ध अर्थमें केर और तण प्रत्यय प्रयुक्त होते हैं। जैसे—कस्य इदं प्रवहणम् ='कस्स केरकं पदं पवहणं' 'यस्य हुंकारेण'=जसु केरे हुंकारणए'। मृच्छकटिक नाटकमें 'एष खलु आर्य्याया अलङ्कार'= 'एसो क्खु अज्जआ केरओ अलङ्कारओ' इत्यादि प्रयोग बनते हैं। सम्भव है यही 'केर' हिन्दीमें 'का' 'की' 'के' हो गया हो। यह पद्धति संस्कृतके षष्ठ्यन्तरूपोंके सादृश्यपर है।

दूसरी पद्धति संस्कृतमें षष्ठी विभक्तिके स्थानमें तद्धित ईय इक, ईन प्रभृति प्रत्ययोंके द्वारा विशेषण शब्द बनाकर प्रयोग करनेकी भी है, जैसे-त्वदीय, मदीय, मासिक, वार्षिक, तावक, मामक ताव-कीन मामकीन इत्यादि विशेषण शब्द बनते हैं। विशेष्यके अनु-सार इनका लिङ्ग और वचन भी बदल जाते हैं। प्राकृतमें भी इसी प्रकार 'परराजभ्यां क्कडिक्कौ च' इस सूत्रसे षष्ठीविभक्तिके सदृश सम्बन्ध अर्थमें 'क' और 'इकृक' प्रत्यय होते हैं। और 'इदमर्थस्य केरः' इससे इदमर्थ (सम्बन्ध) में 'केर' प्रत्यय भी होता है। और उसके विशेष्यके अनुसार 'राजकेरकं पवहणं' 'तवश्शिणीए केरका' 'जसु केरे हुंकारणए' इत्यादि प्रयोग होते हैं सम्भव है इन प्रत्ययोंमें ही कोई हिन्दीकी षष्ठी विभक्तिका 'का' होगया और अपने मूलप्रकृति संस्कृत और प्राकृतके अनुसार विशेष्यके आधीन होकर स्त्रीलिङ्ग विशेष्यके पहले 'की' बहुवचन और सविभक्तिक एकवचनके पहले 'के' हो जाया करता है

संस्कृतकी सप्तमी विभक्तिके एकवचन और बहुवचन रामे, सर्वस्मिन्, रामेषु, सर्वेषु इत्यादि रूपोंकी विभक्तियां प्राकृतमें 'ए, म्मि, स्सि, सुं, सु प्रभृति अनेक रूपोंमें परिवर्तित होती हैं, जिससे हमम्मि तुमम्मि अगिम्मि इत्यादि प्रयोग प्राकृतमें बनते हैं वही 'म्मि' हिन्दीमें आकर 'में' होगयी है। जिससे हममे तुममे आगमे इत्यादि प्रयोग बनते हैं।

इस प्रकार जब हिन्दी विभक्तियोंका सम्बन्ध किसी न किसी-प्रकार अपनी जननी संस्कृतसे ही है तो विभक्तियोंको शब्दोंसे अलग लिखनेका सवाल ही नहीं पैदा होता है। अत. हिन्दीमें भी विभक्तियां संस्कृतके समान शब्दोंके साथ मिलाकर लिखी-जाय यह सभी हिन्दी प्रेमियोंको स्मरण रहना चाहिये।

संस्कृतमें तीन वचन होनेपर भी सुगमताके कारण प्राचीन आर्ष प्राकृतमे जैसे एक वचन और बहुवचन ये दो ही भेद पाये जाते हैं। वैसे ही हिन्दीमें भी दो ही वचन हैं। और हिन्दीमें विशेष सरलता यह है कि दोनों वचनोंमे समान ही 'ने' 'को' 'से' 'का' और 'में' विभक्तियां लगती हैं। इनके योग होने पर शब्दोंमें ही कुछ विकार हो जाया करता है। जैसे—घोडा, घोड़ेको, घोड़ोंको, घोड़ेसे, घोड़ोंसे इत्यादि।

यह भी विचारनेकी बात है कि जिन विभक्तियोंके योग होने-पर 'घोडा' 'का' 'आ' 'ए' और 'ओं' हो गया वे विभक्तियां किस आधारपर अलग लिखी जा सकती हैं। यह तो स्पष्ट प्रतीत है कि विभक्तियोंके योगसे शब्दमें विकार होकर व्याकरणके

नियमानुसार 'घोड़ेको, घोड़ोंको' इत्यादि एक पद हो जाते हैं। जिसके लिये महावैयाकरण पतञ्जलि महाराजने कहा है कि,— 'अपदं न प्रयुञ्जीत' 'न केवला प्रकृतिः प्रयोक्तव्या, नापि केवल. प्रत्ययः' (अप्रातिपदिकका प्रयोग न करना चाहिये और न तो केवल प्रकृति का ही प्रयोग करना चाहिये न केवल प्रत्ययका)।

चतुर्थी विभक्तिमें आजकल 'के लिये' ऐसा लिखा जाता है। इसका कारण यह है कि, प्राचीन आर्ष प्राकृतमें चतुर्थी विभक्ति बिलकुल नहीं है। इसीकारण चण्डदेवने अपने प्राकृत लक्षणमें 'षष्ठीवच्चतुर्थी' ऐसा सूत्र लिखकर षष्ठीमें ही चतुर्थीका अन्तर्भाव करदिया है। इसलिये शब्दके बाद प्रायः षष्ठी विभक्तिका चिन्ह 'के' लिखकर उसके बाद निमित्त, हेतु अर्थ प्रभृति शब्द जोड़कर चतुर्थीका काम चलानेकी प्रथा भी कुछ दिन पहले थी। बङ्गलामें अभी भी 'ताहार जन्य' ऐसा बोला ही जाता है। पर हिन्दीमें अब सिर्फ 'के' के 'बाद' लिये शब्द ही जोड़ते हैं। यहाँ 'के' को शब्दके साथ लिखकर 'लिये' को अलग लिखें तो कोई हर्ज नहीं। यदि चाहें तो उसे भी अब निपातसिद्ध 'केलिये' ऐसा एक प्रत्यय बना सकते हैं। पर हिन्दीके उच्चारणकी ओर ध्यान देने पर तो 'के' को शब्दके साथ लिखकर 'लिये' को पृथक् लिखना ही हिन्दीके स्वरूपके अनुसार है।

हिन्दी भाषाकी संसारकी सभी भाषाओंसे यही एक सर्वमान्य बेजोड़ विशेषता है कि इसकी देवनागरी लिपि इस भाषाको यथार्थ अविकृत रूपसे सर्वाङ्गसुन्दर लिपिबद्धकर जैसी यह

बोली जाती है वैसी ही लिखकर इसे दिखा देती है। यह बात जैसे वर्णोंके उच्चारणके लिये है वैसे ही आनुपूर्वीके लिये भी तो होना चाहिये। जब रामने, रामको, रामसे और राममें इत्यादि पदोंका उच्चारण हिन्दी भाषामें विना कहीं रुके एक साथही किया जाता है, तो फिर किस आधार पर इस भाषा और लिपिकी प्रकृतिके विरुद्ध 'राम' कहकर कुछ ही देर तक रुकनेके बाद ने, को, से, और में इन निरर्थक विभक्तिके अक्षरोंको संज्ञासे पृथक् कुछ अवकाश छोड़कर दूर लिखा जाता है?

रेकार्डमें भी वक्ता या गायक जहाँ जितना विराम लेता है, वहाँ उतनी ही जगह खाली रह जाती है। जहाँ विराम नहीं लेता वहाँ जगह खाली नहीं रहती। इसीप्रकार जब संज्ञा और विभक्तियोंके बीच उच्चारणमें विराम नहीं है, तो लिखनेमें भी आप इनके बीच स्पेस (जगह) नहीं छोड़ सकते।

यदि इतनेपर भी अलग लिखनेका ही हठ रखेंगे तो 'दालकी' जगह 'दाल की' 'रोटीकी' जगह 'रोटी की' लड़ाईकी' जगह 'लड़ाई की' लिखनेसे कितना अनर्थ हो जायगा इसे भी ख्याल कीजिये।

जो महाशय शब्दोंसे विभक्तियोंको अलग लिखते हैं, उनकी यह भी एक दलील है कि, जैसे अंग्रेजीमें विभक्तियाँ अलग होती हैं; वैसे ही हिन्दीमें भी रहें। इट् इज् ए स्टॅच्यू ऑफ लोकमान्य तिलक—It is a Statue of Lokamanya Tilak (यह लोकमान्य तिलककी प्रतिमा है)। यहाँ, लोकमान्य तिलक (Lokmanya

Tilak) शब्द अलग और ऑफ (of) (विभक्ति) अलग है। बस, जैसे यहाँ शब्दसे विभक्ति स्वतन्त्र है, उसी प्रकार हिन्दीमें भी हो। परन्तु उनको यह भी ध्यान रहे कि, 'औफ टू, इन', प्रभृति प्रिपोजिशन हैं। इनका 'पोजिशन' (पद) 'प्रि' (शब्दोंसे पहले) है। हमारी विभक्तियाँ सफिक्स (प्रत्यय) हैं। उनके संसर्गसे शब्दोंमें विकार होकर शब्द और विभक्तियाँ मिलकर एक पद कहाता है।

जब संस्कृतकी विभक्तियाँ ही प्राकृत द्वारा बदलकर हिन्दीको विभक्तियाँ बन गयी हैं तो अपनी जननी संस्कृतका अनुकरण करनेमें ही हिन्दीकी राष्ट्रियता है। संस्कृतमें विभक्तियाँ एक साथ ही रहती हैं। "इयं लोकमान्यस्य प्रतिकृतिः।" यहाँ "लोकमान्य" शब्दसे "स्य" विभक्ति अलग नहीं लिख सकते, जहाँ तक हो, हिन्दीमें इसी रीतिका प्रचार होना चाहिये।

बहुत लोग यह भी कहते हैं कि, यदि शब्दोंसे विभक्तियाँ स्वतन्त्र नहीं होतीं तो, "चौदह पीढ़ी 'तक' का पता" "संसार 'भर'के ग्रन्थ" "आप 'ही' को देखा," "उन्होंने कहा" और "वह घरमेंसे आये" इत्यादि वाक्योंमें कहीं विभक्तिके पहले ही दूसरा प्रत्यय, शब्द लग जाना और कहीं दो २ विभक्तियोंका रहना कैसे सम्भव होता? पर मेरे ध्यानसे विकृत रूपमें प्रचलित ऐसे २ दो चार वाक्योंको देखकर सिद्धान्त निर्णय नहीं किया जा सकता। "चौदह पीढ़ीका पता," "संसारके ग्रन्थ" "आपको ही देखा", "उनने ही कहा" आदि स्थलमें ही पूर्वोक्त विकृत वाक्य

हैं। यदि इन प्रयोगोंके साधुत्व परही हठ है तो संस्कृतमें जैसे प्रचलित प्रयोगोंको निपातके द्वारा सिद्ध मानते हैं वैसे ही हिन्दीमें ऐसे प्रयोगोंको निपातके द्वारा सिद्ध मान सकते हैं यदि ऐसा न हो तो किसी अन्य उपसर्ग 'भी' को शब्द और विभक्तिके बीचमें रखकर देख लीजिये, कैसा बेतुका रूप होजाता-है। 'रामभीने' 'रामभीको' 'रामभीसे' इत्यादि कैसा अपशब्द रूप मालूम पड़ता है। योंही 'घरसे आये' की जगह 'घरमेंसे आये' आदि वाक्य भी रूढ़ि-प्रकृतिमें लाकर अशुद्ध रूपमें बोले जाते हैं। यह सब गोल-माल भी विदेशी भाषाओंके संसर्गसे ही हुआ है। वस्तुतः शब्द और विभक्तिका तो, ऐसा समवाय-सम्बन्ध है कि, "पुस्तक पढ़ी" आदि वाक्योंमें कर्म आदिकी विभक्तियाँ शब्दोंमें ही लीन हैं। फिर विभक्तियाँ स्वतन्त्र कैसे? जगह भी अधिक लगती है। एक बात और यह है; कि, जिस भाषासे हमारे जीने मरनेका सम्बन्ध है, जिस भाषाके भावों और विचारोंसे हमारे मज्जा-मांसका सम्बन्ध है, उसी संस्कृतके अनुकरणपर हम अपनी हिन्दीकी साहित्य-रचना करें तो, बङ्गला आदिकी तरह इसका भी शीघ्र ही उदय हो सकता है।

क्रिया-रूपोंमें मतवाद।

गया क्रियाकी "गयी" और लिया क्रियाके "लिये" आदि प्रयोगोंमें 'ई' और 'ए' लिखनेवाले दलील पेश करतेहैं कि, हमको

केवल मात्राएँ ही लिखनी पड़ती हैं और आपको मात्रा तथा 'य' अक्षर भी। परन्तु विचारनेपर मालूम होगा कि, आपकोभी हमारे ही समान हाथ घुमाना पड़ता है। दूसरी बात यह है कि, आप उच्चारण तो, करें 'य' के साथ 'ई' और 'ए' का: परन्तु लिखें केवल 'ई' और 'ए', यह ठीक नहीं। इसके सिवा व्याकरणके नियमानुसार यह रीति सोलहो आने अनुचित है कि, गयामें 'य' लिखकर 'गयी' या 'गये' में 'य' छोड़ दें। ऐसे ही अशुद्ध प्रयोगोंके प्रचारसे 'हुआ' में 'आ' लिखकर भी लोग इसके बहुवचन रूप 'हुए' की जगह 'हुये' लिखते हैं, बहुत लोग तो, 'हुवे' भी लिखते हैं। इसलिये जैसी सामान्य क्रिया गया, किया, हुआ आदि लिखें, उसी प्रकार, व्याकरणके अनुसार, उनके गयी, लिये हुई, हुए आदि शुद्ध रूप भी रखें। और हिन्दी की प्रकृति है 'इ' के बाद उसमें 'य' काही उच्चारण होता है इसलिये 'चाहिये' 'केलिये' इत्यादि सभी जगह 'इ' के बाद 'य' ही लिखा करें।

बहुत लोग रखना और सकना धातुओंके रक्खा, रक्खी, सक्का, सक्की आदि रूप भी लिखकर बहुत ही गड़बड़ करते हैं। भला रखना धातुके भूत कालके रूपोंमें 'क्' कहाँसे टपक पड़ता है? फिर, यदि वर्तमान कालमें 'रक्खता' है ऐसा आपके अनुयायी लिखने लगें तब आप क्या उत्तर देंगे? सक्का सक्कीमें ककारका अकार कहाँ बढ़ जाता है? ऐसा ही लिखना है तो, सक्कना धातु ही क्यो नहीं गढ़ लेते? कुछ लोग जवाब देते हैं कि, उच्चारणके अनुसार ही रक्खा आदि रूप लिखे जाते हैं।

अच्छा, तो फिर, बहुत लोग तो, स्थायी और दायीके 'य' का उच्चारण ही नहीं करते तो, क्या इनके स्थाई, और दाई रूप ही आप लिखेंगे ? कभी नहीं। इसलिये रक्खा, रक्खी, सक्ता, सक्ती न लिखकर रखा, रखी, सकता, सकती लिखना उचित है।

भाषाकी मौलिकता।

हिन्दीमें संस्कृत-फारसी शब्दोंकी भरमार करना उचित नहीं; क्योंकि, हिन्दीकी भी कुछ मौलिकता रहनी चाहिये। बिना कुछ निजकी मौलिकताके भाषा स्थिर नहीं रहती। यह समझना ठीक नहीं कि, संस्कृत आदिकी विभक्तियोंको हटा देना ही हिन्दी है। आजकल हिन्दीमें कुछ ऐसे संस्कृत-बहुल-ग्रन्थ निकल रहे हैं कि, यदि आप संस्कृतके अच्छे विद्वान् हैं तब तो, कुछ उनका अर्थ लगा लीजिये ; नहीं तो पुस्तक खरीदकर दर्शन किया कीजिये ; वह समझमें आनेको नहीं। भला वैसी किताबोंसे क्या फायदा, जब कि, उनसे साधारणजनताको कुछ लाभ ही नहीं। यही हाल फारसीके पुछल्ले जोड़नेवालोंका भी है। फारसीवाले भी एक प्रकारसे हिन्दीकी उन्नतिमें बाधक हो रहे हैं। मुसलमान भाई भी भारतवासी हैं, वे भी अब हिन्दुस्तानी हो गये हैं। हिन्दुस्थानकी भलाई-बुराईसे उनकी भी भलाई-बुराई है। अतः अब उनको और फारसीके पक्षपाती हिन्दुओंको भी राष्ट्रभाषामें अप्रचलित फारसी शब्दोंको नहीं

मिलाना चाहिये। विभिन्न भाषाओंके शब्दोंकी हिन्दीमें भरमार करनेसे राष्ट्रभाषाकी मौलिकताके नाशके साथ ही एक और भी भारी हानि होती है, वह यह है कि, यदि कोई विदेशी मनुष्य हिन्दी पढ़ना चाहे तो, उसको हिन्दी-साहित्यके व्याकरण-काव्यके अध्ययनके साथ ही संस्कृत, फारसी, उर्दू और अंग्रेजी आदि भाषाओंके व्याकरण-काव्यका भी अध्ययन करना पड़ेगा। इस तरह वह हिन्दीसे पराङ्मुख हो जायगा। संस्कृत तो हिन्दीकी जननी है। अतः हिन्दीकी प्रौढ़ताके लिये संस्कृतका अध्ययन तो नितान्त आवश्यक ही है। महात्मा गान्धीने भी गुरुकुलके अपने भाषणमें संस्कृतका अध्ययन भारतवासियोंके लिये अनिवार्य्य बताया है। हाँ, जो अन्य भाषाओंके शब्द हिन्दीमें पूरे प्रचलित हैं, उन्हें निकालनेकी भी जरूरत नहीं; क्योंकि, वे अब हिन्दीके निजी शब्द हो गये हैं। इसलिये मेरी समझमें महात्मा गान्धीकी राय बहुत अच्छी है कि, "न इधर संस्कृत-शब्दोंकी ही भरमार होनी चाहिये और न उधर फारसी शब्दोंकी। हिन्दी, हिन्दुस्तानीमें कोई भेद नहीं है। जो प्रचलित शब्द हैं, वे सदा व्यवहारमें चलते रहें।"

मेरी समझसे भाषा सरल और सादी होनी चाहिये। जैसी भाषा आप बोल-चालमें रखते हैं, वैसी ही लिखनेमें भी रखें। इसीसे भाषाकी उन्नति होती है और पढ़नेवालेकी भी रुचि बढ़ती है। हाँ, दार्शनिक और वैज्ञानिक आदि

कठिन विषयोंको लिखते समय कुछ कठिन शब्दोंका प्रयोग करना ठीक हो सकता है; परन्तु वे भी विशेष सामासिक न रहें। हाँ साहित्यिक भाषाकी भी विशेषता रहनी ही चाहिये। उन्नत भावोंके लिये भाषा उन्नत होती ही है इसका तो मैं विरोधी नहीं हूँ, इसके तो कायल सभीको होना चाहिये, जहाँ तहाँ अलङ्कार भी होने चाहिये; पर शब्दालङ्कार और शब्दाडम्बर ज्यादा न हो। शब्दालङ्कारमें एक अनुप्रास है, जो सभीको प्रिय होता है। उसे जहाँ तहाँ व्यवहारमें लाना अनुचित नहीं।

चन्द्रविन्दु और अनुस्वार।

हिन्दीमें उच्चारणके ख्यालसे देखा जाय तो, प्रायः अधिक स्थानों पर चन्द्रविन्दुका ही भान होता है। अत उच्चारण पर ध्यान देकर लिखना चाहिये, और हिन्दी व्याकरणसे चन्द्रविन्दु लिखना ही शुद्ध भी है। में, हैं, पुस्तकें आदिमें स्पष्ट चन्द्र-बिन्दुका ही उच्चारण होता है; परन्तु सुभीतेके लिये लोग अनुस्वार ही लिखते हैं।

यदि एक पदमें अनुस्वारका उच्चारण मालूम हो तो, उसे आगेके वर्गीय अक्षरके अनुसार पञ्चम अक्षर कर देना चाहिये। जैसे,—बङ्किमचन्द्र, गङ्गा, कन्धा, चञ्चल, ठण्ढा,

छाम्ब, पञ्जाब, झञ्झा, दण्ड, तन्तु, मन्थर, धन्धा, पम्पा, बम्बई, बम्भोला, सन्नाटा, मम्मट इत्यादि।

---

† भाषा।

परस्पर एक दूसरेके विचारोंको व्यक्त (प्रगट) करनेके लिये भाषाही सर्वोत्कृष्ट साधन है। इसके दो भेद हैं—एक ध्वन्यात्मक दूसरा वर्णात्मक। बोलनेमें ध्वन्यात्मक भाषाका उपयोग होता है और लिखनेमें वर्णात्मक।

नाभीकी वायु हृदय कमलको स्पर्श करती हुई मुखमें आकर जीभको कण्ठतालु प्रभृति स्थानोंसे संयोग करनेका अवसर देती है। तभी ध्वनियाँ निकलती हैं। इन्हीं ध्वनियोंके अनुसार जो साङ्केतिक चिह्न बनालिये गये हैं। वेही अक्षर, वर्ण (लेटर Letter) लिपि (स्क्रिप्ट् Script) कहे जाते हैं। जैसे—अ, क, च, ट, त इत्यादि।

एक या अधिक ध्वनियों या वर्णोंसे शब्द बनते हैं। जैसे—राम, शिव, देश, इत्यादि।

---

†भाष्यते या सा भाषा (जो बोली जाय उसे भाषा कहते हैं) इस व्युत्पत्ति और भाषा-विज्ञान (Philology) के आधारपर संसारकी भाषाओंका अन्त नहीं है, पर यहाँ हमें केवल हिन्दी भाषाके नियमों पर ही विचार करना है इसलिये अन्य भाषाओं पर प्रकाश नहीं डाला गया है।

सार्थक शब्द या शब्दोंके साथ क्रियाके योग होनेसे वाक्य बनते हैं। जैसे—शिव आता है। देश उन्नतिको प्राप्त होता है इत्यादि।

व्याकरण।

जिसके द्वारा वर्णों, शब्दों और वाक्योंके लिखने और बोलनेमें शुद्धि अशुद्धिका पूरा ज्ञान हो उसे व्याकरण कहते हैं।

उसके चार मुख्य भेद यहां दिखाये जायेंगे। १ वर्णविभाग (अर्थोग्राफी Orthography) शब्दविभाग (इट्मालोजी Etymology) वाक्यविभाग (सिन्टेक्स Syntax) और काव्य विभाग (लिटरेचर Literature)।

जिसमें वर्णोंके आकार-प्रकार, भेद, उच्चारण और सन्धि आदिका विचार हो उसे वर्ण विभाग कहना चाहिये।

जिसमें शब्दोंके भेद, रूप, लिङ्ग आदिका निर्णय हो, और शब्दोंसे दूसरा शब्द बनानेका विचार हो उसे शब्द विभाग जानना चाहिये।

जिसमें वाक्योंके भेद, वाक्य बनानेकी प्रक्रिया, अनुवाद, निबन्ध और विराम चिन्ह आदिका विचार हो उसे वाक्यविभाग कहना चाहिये।

जिसमें काव्यका स्वरूप छन्द, दोष, गुण, रीति और अलङ्कार प्रभृतिका विचार हो उसे काव्यविभाग समझना चाहिये।

———

वर्णविभाग।

हिन्दी भाषा देवनागरी अक्षरोंमें लिखी जाती है। इस कारण इसकी लिपिको देवनागरी लिपि कहते हैं। लिपिसमूहको लिपिमाला, वर्णमाला कहते हैं। इनमें नीचे लिखे अनुसार ४८ अड़तालीस वर्ण हैं।

अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, ऋ, ॠ, ऌ, ए, ऐ, ओ, औ। क, ख, ग, घ, ङ। च, छ, ज, झ ञ। ट, ठ, ड, ढ, ण। त, थ, द, ध, न। प, फ, ब, भ, म। य, र, ल, व। श, ष, स, ह, ं, ँ।

इनमें स्वर (व्हावेल Vowel) और व्यञ्जन (कन्सोनैन्ट Consonant) नामके दो भेद हैं।

स्वर उसे कहते हैं जो विना किसी दूसरेकी सहायतासे बोला जाय। जैसे अ, इ, उ, इत्यादि।

व्यञ्जन उसे कहते हैं जो स्वरोंकी सहायतासे ही बोला जाय। क, च, ट, त, प, इत्यादि।

स्वरोंमें भी मूल स्वर और सन्धिस्वर नामके दो भेद हैं। जो स्वतन्त्र स्वर हैं उन्हें मूल स्वर कहते हैं। जैसे अ, इ, उ, ऋ, ऌ।

जो मूलस्वरोंके समान मेल और विषम मेलसे बनते हैं उन्हें सन्धि स्वर कहते हैं। जैसे—आ, ई, ऊ ॠ, ए, ऐ, ओ, औ, इस तरह ये १३ स्वर हैं।

उच्चारण कालके भेदसे स्वरोंके ह्रस्व, दीर्घ और प्लुत ये तीन भेद होते हैं। मूलस्वरके उच्चारणमें जितना काल लगता

है उसे मात्रा कहते हैं। [1]जिन स्वरोंके उच्चारणमें एक मात्राका काल लगे वे एकमात्रिक, ह्रस्व, जिनमें दो मात्राओंका काल लगे वे द्विमात्रिक, दीर्घ और जिनमें तीन मात्राओंका काल लगे वे त्रिमात्रिक, प्लुत कहे जाते हैं।

इन तीनोंका क्रमशः उदाहरण मुर्गेकी बोलीमें पाया जाता है। कु कू, कू ३।

वेदमें इन्हीं स्वरोंके ऊपर नीचे उतार चढ़ावके भेदसे, [2]उदात्त, अनुदात्त और स्वरित नामके तीन भेद होते हैं।

[3]उच्चारणके स्थान-भेदसे इन तीनोंके अनुनासिक, निरनुनासिक नामके दो भेद होते हैं। जब ये मुख और नासिका दोनोंकी सहायतासे बोले जायँगे तो अनुनासिक, जब केवल मुखसे बोले जायगें तो निरनुनासिक होंगे। जैसे—अँ, अ।

[4]काव्यमें स्वरोंके लघु (।) और गुरु (ऽ) नामके दो भेद होते हैं। साधारणतः ह्रस्वको लघु और दीर्घको गुरु कहते हैं, पर संयुक्त अक्षरोंके पहले तथा अनुस्वार और विसर्ग वाले स्वर गुरु कहे जाते हैं। किन्तु 'प्र हे वा' इस सूत्रके आधारपर प्र और ह के पूर्वका ह्रस्व वर्ण कहीं गुरु होता है कहीं नहीं भी होता है। हिन्दीमें इस नियमका ठीकसे पालन नहीं होता क्योंकि इसमें शब्दके अन्तके अ स्वरका उच्चारण नहीं होता है

१—ऊकालोऽज्झ्रस्वदीर्घप्लुत। २—उच्चैरुदात्त। नीचैरनुदात्त। समाहार स्वरित। ३—मुखनासिकावचनोऽनुनासिक। ४—संयुक्ताद्यं दीर्घं सानुस्वारं विसर्गसम्मिश्रम्। विज्ञेयमक्षरं गुरु पादान्तस्थं विकल्पेन।

जैसे—रामका उच्चारण। राम् होता है इसी कारण रामश्रवणका भी उच्चारण राम् श्रवण करते हैं। पर यह ठीक नहीं है। इसका उच्चारण राम-श्रवण ऐसा होना चाहिये। जिसमें सुनने वालोंको म गुरु मालूम पड़े। पादान्त ह्रस्व विकल्पसे गुरु होता है।

व्यञ्जनके तीन भेद हैं—स्पर्श, अन्तःस्थ और ऊष्मा।

'क' से लेकर 'म' तक पचीस व्यञ्जन स्पर्श कहलाते हैं। य र ल व इन चारोंको अन्तःस्थ कहते हैं। श ष स ह ये चार ऊष्मा कहे जाते हैं। †अनुस्वार और विसर्ग ये भी दो व्यञ्जन हैं। ये स्वरके बाद बोले जाते हैं। अन्य व्यञ्जन स्वरसे पहले बोले जाते हैं इतना ही अन्तर है। इस तरह कुल ३५ पैंतीस व्यञ्जन हैं।

स्पर्श—	क	ख	ग	घ	ङ—कवर्ग
	च	छ	ज	झ	ञ—चवर्ग
	ट	ठ	ड	ढ	ण—टवर्ग
	त	थ	द	ध	न—तवर्ग
	प	फ	ब	भ	म—पवर्ग
अन्तःस्थ—	य	र	ल	व	
ऊष्मा—	श	ष	स	ह	

---

† अनुस्वार, चन्द्रबिन्दु और विसर्ग इनको संस्कृतमें अयोगवाह कहते हैं। क्योंकि, वहां ये स्वर भी हैं और व्यञ्जन (हल्) भी हैं।

स्थान और प्रयत्न।

मुखके जिस भागसे जिस अक्षरका उच्चारण होता है उसे उस अक्षरका स्थान कहते हैं।

[१]अ, क, ख, ग, घ, ङ, ह और विसर्ग (:) इनका कण्ठ स्थान है।

[२]इ, च, छ, ज, झ, ञ, य, श इनका तालु स्थान है।

[३]ऋ, ट, ठ, ड, ढ, ण, र, ष इनका मूर्धा स्थान है।

ड़, ढ़—इनकी ध्वनियोंके उच्चारणमें अन्दर ले जाने और फिर बाहर लानेसे जिह्वा और मुर्द्धाका दो बार स्पर्श होता है, इसलिये इन्हें द्विस्पृष्ट कहते हैं। जैसे—घड़ा बढ़ई।

[४]लृ, त, थ, द, ध, न, ल, स इनका दन्त स्थान है।

[५]उ, प, फ, ब, भ, म इनका ओष्ठ स्थान है।

[६]व का दन्तोष्ठ स्थान है।

[७]ए, ऐ का कण्ठतालु स्थान है।

[८]ओ, औ का कण्ठोष्ठ स्थान है।

[९](ं) अनुस्वार का नासिका स्थान है।

[१०](ँ) चन्द्रबिन्दु तथा ङ, ञ, ण, न, म—ये मुख तथा नासिका से बोले जाते हैं। इस कारण इन्हें अनुनासिक भी कहते हैं।

१—अकुहविसर्जनीयानां कण्ठः। २—इचुयशानां तालु। ३—ऋटुरषाणां मूर्धा। ४—लृतुलसानां दन्ताः। ५—उपूपध्मानीयानामोष्ठौ। ६—वकारस्य दन्तोष्ठम्। ७—एदैतोः कण्ठतालु। ८—ओदौतोः कण्ठोष्ठम्। ९—नासिकाऽनुस्वारस्य। १०—ञमङणनानां नासिका च।

प्रयत्न।

वर्णोंके उच्चारणमें होने वाले व्यापारको प्रयत्न कहते हैं। वे दो प्रकारके हैं—वर्णोंके उच्चारणसे पहले आभ्यन्तर, वर्णोंके उच्चारणसे अनन्तर, बाह्य। आभ्यन्तर प्रयत्न पाँच प्रकारके हैं—
स्पृष्ट, ईषत्स्पृष्ट, विवृत, ईषद्विवृत और संवृत।

१—'क' से 'म' तक वर्णोंका स्पृष्ट प्रयत्न है क्योंकि इनके उच्चारणमें जिह्वाका भिन्न भिन्न स्थानोंसे पूरा स्पर्श होता है।

२—य, र, ल, व, इनका ईषत्स्पृष्ट प्रयत्न है। इनके उच्चारणमें जिह्वाका थोड़ा स्पर्श होता है।

३—स्वरों का विवृत प्रयत्न है। इनके उच्चारणमें वागिन्द्रिय पूरी तरह खुलती है।

४—श, ष, स, ह,—इनका ईषद्विवृत प्रयत्न है। इनके उच्चारणमें वागिन्द्रिय थोड़ी खुलती है।

५—केवल ह्रस्व अकार संवृत कहा जाता है। (प्रयत्नोंका कार्य *संस्कृत व्याकरणमें आता है।*) *बाह्य प्रयत्नके ११ एगारह* भेद हैं—

विवार, श्वास, अघोष, संवार, नाद, घोष, अल्पप्राण, महाप्राण, उदात्त, अनुदात्त और स्वरित।

वर्गोंके पहले और दूसरे अक्षरों (क ख, च छ, ट ठ, त थ, प फ,) और श ष स का विवार, श्वास और अघोष प्रयत्न है। शेष व्यञ्जनोंका संवार, नाद और घोष प्रयत्न है।

जिन वर्णोंके उच्चारणमें थोड़ा परिश्रम होता है उनका अल्पप्राण प्रयत्न होता है। वर्गोंका पहला, तीसरा, पांचवां अक्षर, य र ल व और अनुस्वार (ं) इनका अल्पप्राण प्रयत्न है।

जिन वर्णोंके उच्चारणमें अधिक परिश्रम होता है उनका महाप्राण प्रयत्न है। वर्गोंका दूसरा तथा चौथा अक्षर, श, ष, स, ह और विसर्ग (:)—इनका महाप्राण प्रयत्न है। स्वरोंका उदात्त अनुदात्त और स्वरित प्रयत्न है। (इन्हीं प्रयत्नोंके कारण बहुतसे अक्षर एक स्थानके होने पर भी आपसमें एक दूसरेसे भिन्न उच्चरित होते हैं।)

उच्चारण सम्बन्धी विशेष नियम।

हिन्दीमें प्रायः अकारान्त शब्दोंके अन्त वाले 'अ' के उच्चारण पर जोर नहीं दिया जाता। जैसे—शिव, सूर्य्य।

हिन्दीमें तत्समशब्दोंके 'ऐ' का उच्चारण 'अइ' और 'औ' का उच्चारण 'अउ' होता है। जैसे—ऐश्वर्य्य, कौतुक। अन्य शब्दोंमें 'ऐ' का उच्चारण 'अय्' और 'औ' का उच्चारण 'अव्' सा होता है। जैसे—कैसा (कयसा), कौन (कवन)।

शब्दके आदिमें, संयोगमें और अनुस्वारसे परे 'ड' 'ढ' मूर्धन्य बोले जाते हैं। जैसे—डाक, डमरू, ढोल, बुड्ढा, मंडप।

शब्द के मध्यमें और अन्तमें 'ड़ ढ़' छिरस्पृष्ट बोले जाते हैं। जैसे—सड़क, पढ़ना, करोड़, पढ़।

क़, ख़, ग़, का उच्चारण जीभको जरा कण्ठकी ओर ले जाकर किया जाता है, जैसे—क़ौम, ख़त ग़श। ज़ का उच्चारण दाँतोको कुछ बन्द कर वायुको जोरसे निकालनेसे होता है, जैसे—ज़ुकाम, रोज़। फ़ का उच्चारण निचले होंठको ऊपरके दाँतोसे लगाकर किया जाता है। जैसे—फ़ार्म, फ़ीस। ये उच्चारण विदेशी हैं। इन्हे हिन्दी साहित्य सम्मेलनने अस्वीकार करदिया है। उसकी सम्मतिमें हिन्दीका उच्चारण सादे रूपमें ही होना चाहिये। पाणिनिकी शिक्षाके अनुसार 'ज्ञ' का उच्चारण ज्ञ्,न कुछ लोग याज्ञवल्क्यकी शिक्षाके अनुसार ग्न और दक्षिण देशवाले द्न बोलते हैं।

अनुस्वारका उच्चारण हिन्दीमें संस्कृतके (तत्सम) शब्दोंमें तो आगेके अक्षरोंका पञ्चम अक्षर होता ही है। पर हिन्दीके देशी विदेशी और तद्भव शब्दोंमें चन्द्रबिन्दुका उच्चारण अच्छा है।

अनेक अर्थवाले शब्दका कहां क्या अर्थ लेना चाहिये यह काकु (स्वराघात) से जाना जाता है। जैसे—'पढ़ा' शब्दके दो अर्थ हैं—'पढ़ लिया' भूतकाल और 'पढ़ाने की आज्ञा' विधि। 'पढ़ा' 'प' पर जोर देनेसे 'पढ़ लिया' अर्थ का पता चलता है। 'पढ़ा' 'ढ़ा' पर बल देनेसे 'पढ़ानेकी आज्ञा' का बोध होता है।

आजकल 'अ' स्वरमें 'इ' 'उ ए' प्रभृतिकी मात्राएँ जोड़कर

'अ्' 'अु' प्रभृतिलिखनेकी राय कुछ लोग देते हैं; पर यह कहां तक उचित है, सोचना चाहिये। क्योंकि स्वरके ही आधार पर मात्राएं बनी हैं। मूल स्वरोंका ही तो मात्राएं संक्षिप्त रूप हैं, जब मूल स्वर ही नहीं रहेंगे तो मात्राएं कहांसे आवेगीं। अतः ऐसा लाघव किस कामका जो मूलको ही गायब करदे। स, श और ष का उच्चारण व्रजभाषाके कारण बड़ा दूषित हो गया है। इस पर पूरा ध्यान देनेकी आवश्यकता हैं और इसी तरह (ब और व) के उच्चारण पर भी।

मात्राएँ और संयुक्त व्यञ्जन।

'अ' को छोड़ कर शेष सब स्वर व्यञ्जनोंके साथ मिलने पर अपने रूपोंको छोड़कर नीचे लिखे रूपोंमें बदल जाते हैं, इन्हें भी मात्राएँ कहते हैं—

स्वर—आ इ ई उ ऊ ऋ ॠ ए ऐ ओ औ
मात्राएँ– ा ि ी ु ू ृ ॄ े ै ो ौ

(े ै) व्यञ्जनके ऊपर और उ, ऊ, ऋ, ॠ की मात्राएँ (ु ू ृ ॄ) व्यञ्जनके नीचे लगाई जाती हैं। जैसे—

का, कि, की, कु, कू, कृ कॄ, के, कै, को, कौ।

र् में उ, ऊ, ऋ नीचे लिखे प्रकारसे मिलाए जाते हैं—

र्	+	उ	=	रु	गरुड़
र्	+	ऊ	=	रू	कुरूप
र्	+	ऋ	=	ऋ	नैर्ऋत

वर्ण दो प्रकारके हैं—(१) पाई वाले, जैसे—च, म, प, आदि और बिना पाईके, जैसे—ट, ड, द, आदि।

व्यञ्जनोंके संयोगमें यदि पहला व्यञ्जन पाई वाला हो तो पाई हटा देते हैं जैसे—अच्छा, स्यार, म्यान।

पाई रहित व्यञ्जनोंको संयुक्त करनेके लिये ऊपर नीचे लिखते हैं। जैसे—खट्टा, चिट्ठी।

क्, च्, न्, ल्, व्, श्,—ये द्वित्व होने पर ऊपर नीचे और आगे पीछे दोनों प्रकारसे लिखे जाते हैं। जैसे—पक्का पक्का, सच्चा सच्चा, सुन्नत सुन्नत, मल्ल मल्ल, डिव्वी डिव्वी, विश्व विश्व।

कुछ संयुक्त अक्षर निम्नलिखित प्रकारसे भी लिखे जाते हैं—

क्	+	त	=	क्त	भक्त
ङ्	+	क	=	ङ्क	अङ्क
त्	+	र	=	त्र	पुत्र
क्	×	ष	=	क्ष	यक्ष
ज्	+	ञ	=	ज्ञ	यज्ञ
त्	+	न	=	त्न	यत्न
द्	+	ध	=	द्ध	सिद्ध
द्	+	व	=	द्व	द्वितीय
श्	+	र	=	श्र	श्रेणी
ह्	+	म	=	ह्म	ब्राह्मण
ह्	+	ल	=	ह्ल	आह्लाद

अ श्र, ण रण, स क्ष, श श्र,—ये दो दो रूप वाले होते हैं।

संयोगमें र् यदि व्यञ्जनसे पहले हो तो ऊपर (ꣳ) लिखा जाता है, जैसे—धर्म्=धर्म। पाई वाले व्यञ्जनके पीछे हो तो व्यञ्जनमें (प्र) लिखा जाता है जैसे—प्+र्+आ =प्रा, प्राण। पाई रहित व्यञ्जनके पीछे हो तो नीचे ( ) लिखा जाता है, जैसे—ट्+र्+अ=ट्र, राष्ट्र।

संस्कृत सन्धि ।

अक्षरोंके विकारपूर्वक मेलको सन्धि कहते हैं। उसके मुख्य तीन भेद हैं—स्वरसन्धि, व्यञ्जनसन्धि और विसर्गसन्धि।

स्वरसन्धि ।

(१)यदि ह्रस्व या दीर्घ अ, इ, उ, ऋ के बाद ह्रस्व या दीर्घ समान स्वर हो तो दोनो मिलकर दीर्घ होजाता है। जैसे—राम+अयण=रामायण, राम+आश्रम=रामाश्रम, सीता+अभ्युदय=सीताभ्युदय, हरि+इच्छा=हरीच्छा, गौरी+ईश्वर =गौरीश्वर, लघु+ऊर्मि=लघूर्मि, वधु+ उत्सव=वधूत्सव, पितृ+ऋण=पितृण।

(२)यदि ह्रस्व या दीर्घ अ के बाद इ, उ, ऋ के ह्रस्व या दीर्घ कोई रूप हो तो दोनो मिलकर क्रमसे ए, ओ, अर् होजाते हैं। जैसे—नर+इन्द्र=नरेन्द्र, गण+ईश=गणेश, महा+इन्द्र=

(१) अकः सवर्णे दीर्घः। (२) आद्गुणः (इकि)।

महेन्द्र, रमा + ईश = रमेश, राम + उदार = रामोदार, जल + ऊर्मि = जलोर्मि, महा + उपदेश = महोपदेश, महा + ऊर्मि = महोर्मि, वसन्त + ऋतु = वसन्तर्तु, महा + ऋषि = महर्षि।

(३)यदि ह्रस्व या दीर्घ 'अ' के बाद ए, ऐ हो तो दोनों मिलकर ऐ और ओ, औ हो तो दोनों मिलकर औ होजाते हैं। जैसे—एक + एक = एकैक, जल + ओका = जलौका, परम + ऐश्वर्य्य = परमैश्वर्य्य, महा + औदार्य्य = महौदार्य्य।

(४)यदि ह्रस्व या दीर्घ इ, उ, ऋ, ऌ के बाद समान स्वर छोड़कर कोई भी स्वर हो तो इनका क्रमसे य्, व्, र्, ल्, हो जाता है। जैसे—यदि + अपि = यद्यपि, नि + ऊन = न्यून, प्रति + एक = प्रत्येक, अति + ओदन = अत्योदन, सु + आगत = स्वागत, अनु + एषण = अन्वेषण, पितृ + अनुमति पित्रनुमति।

(५)यदि ए, ऐ, ओ, औ के बाद कोई भी स्वर हो तो क्रमसे इनके अय् आय्, अव् आव्, हो जाते हैं। जैसे—ने + अन = नयन, नै + अक = नायक, पो + अन = पवन, पौ + अक = पावक।

(६)परन्तु ए और ओ के बाद यदि दूसरे शब्दके आदि अक्षर 'अ' आजाय तो उस अ का लोप हो जाता है। जैसे—हरे + अव = हरेऽव, विष्णो × अव = विष्णोऽव।

व्यञ्जनसन्धि।

(१)यदि वर्गके प्रथम अक्षरोंके बाद कोई भी स्वर औरवर्गका

---

(३) वृद्धिरेचि। (४)इको यणचि। (५)एचोऽयवायावः। (६)एङः पदान्तादति। (१) झलां जशोऽन्ते। यरोऽनुनासिकेऽनुनासिको वा।

तीसरा और चौथा अक्षर तथा य, र, ल, व, (अन्तःस्थ) परे होतो उस प्रथम अक्षरका अपने वर्गका तीसरा अक्षर हो जाता है। पर यदि पञ्चम अक्षर परे होतो अपने वर्गका पञ्चम अक्षर भी होता है। जैसे--वाक् + आडम्बर = वागाडम्बर, वाक् + ईश = वागीश, दिक् + गज = दिग्गज, प्राक् + घन = प्राग्घन, धिक् + याचना = धिग्याचना, वाक् + रोध = वाग्रोध, दृक् + लोभ = दृग्लोभ, सम्यक् + वदति = सम्यग्वदति, अच् + अन्त = अजन्त, परिव्राट् + उवाच = परिव्राड्वाच। तत् + अत्र = तदत्र, तत् + योग = तद्योग, वाक् + मय = वाङ्मय, अच् + मात्र = अञ्मात्र, जगत् + नाथ = जगन्नाथ, जगद्नाथ।

(२)तवर्गका चवर्ग और टवर्ग के अक्षरोंसे योग होनेपर उनके ही समानका अक्षर हो जाता है। जैसे--महत् + छत्र = महच्छत्र, एतत् + चन्द्रमण्डल = एतच्चन्द्रमण्डल, एतद् + छाया = एतच्छाया, उत् + टलति = उट्टलति, तत् + टीका = तट्टीका, सत् + ठकार = सट्ठकार, एतत् + ठक्कुर = एतट्ठक्कुर, भवत् + जीवन = भवज्जीवन, विपद् + जाल = विपज्जाल, महत् + झञ्झन = महज्झञ्झन तद् + झनत्कार = तज्झनत्कार, उत् + डीन = उड्डीन, तद् + डिण्डिम = तड्डिण्डिम, उत् + ढौकते = उड्ढौकते, एतद् + ढक्का = एतड्ढक्का, महान् + डीयते = महाण्डीयते, राजन् + ढौकसे = राजण्ढौकसे, याच् + ना = याच्ञा, यज् + न = यज्ञ।

(३)वर्गके प्रथम अक्षरोंके बाद यदि 'ह' हो तो प्रथम अक्षर

---

(२) स्तो श्चुना श्चुः। ष्टुना ष्टुः। (३) झयो होऽन्यतरस्याम्।

तो अपने वर्गका तृतीय होता है और हकार उस वर्गका चौथा हो जाता है। जैसे—वाक्+हरि=वाग्घरि, अच्+हल्=अज्झल्, तद्+हित=तद्धित, षट्+हलानि=षड्ढलानि, ककुप्+हारक=ककुब्भारक।

(४)यदि तवर्गके बाद लकार अक्षर परे होतो तवर्गका लकार हो जाता है ('न्' अनुनासिक है तो 'ल्' भी अनुनासिक ही होगा) जैसे—बृहत्+ललाट=बृहल्ललाट, एतद्+लीलोद्यान=एतल्लीलोद्यान, महान्+लाभ=महाँल्लाभ।

(५)'न्' के बाद यदि च, छ, ट, ठ, त, थ, हो तो 'न्' का अनुस्वार हो जाता है और इन अक्षरोंमें क्रमशः तालव्य, मूर्धन्य और दन्त्य सकारोंसे योग हो जाता है। जैसे—नृत्यन्+चकोर=नृत्यंश्चकोर, धावन्+छाग=धावंश्छाग, चलन्+टिट्टिभ=चलंष्टिट्टिभ, महान्+ठक्कुर=महांष्ठक्कुर, हसन्+तरति=हसंस्तरति, गच्छन्+थुत्करोति=गच्छंस्थुत्करोति।

(६)यदि तवर्गके बाद 'श' होतो 'श' को 'छ' हो जाता है और तवर्गको २९ वें पृष्ठमें कथितनियम नं० २ के अनुसार चवर्गसे योग हो जानेके कारण चवर्ग ही हो जाता है जैसे—श्रीमत्+शङ्कराचार्य्य=श्रीमच्छङ्कराचार्य्य, तद्+शरीर=तच्छरीर।

(७)पदान्त 'म्' के बाद यदि अन्तस्थ या ऊष्मवर्ण हो और

---

(४) तोर्लि। (५) नश्छव्यप्रशान्। अनुनासिकात् परोऽनुस्वारः। खरवसानयोर्विसर्जनीयः। विसर्जनीयस्य स। (६) शश्छोऽटि। (७) मोऽनुस्वारः। नश्चापदान्तस्य झलि।

अपदान्त 'न्' के बाद केवल उष्मवर्ण हो तो दोनोंको अनुस्वार हो जाता है। जैसे—सत्वरम् + याति = सत्वरं याति, करुणम् + रोदिति = करुणं रोदिति, विद्याम् + लभते = विद्यां लभते, भारम् + वहति = भारं वहति, शय्यायाम् + शेते = शय्यायां शेते, कष्टम् + सहते = कष्टं सहते मधुरम् + हसति = मधुरं हसति, दन् + शनम् = दंशनम्, मीमान् + सते = मीमांसते, बृन् + हितम् = बृंहितम्।

(८)'न्' या 'म्' के बाद स्पर्श वर्ण होतो दोनों अक्षरोंके आगेके वर्गके पञ्चम अक्षर हो जाते हैं। (अपदान्तके लिये यह नियम नित्य है। पर पदान्त 'म्' का विकल्पसे अनुस्वार भी होता है। जैसे—आशन् + कते = आशङ्कते, आलिन् + गति = आलिङ्गति, वन् + चयति = वञ्चयति, उत्कन् + ठते = उत्कण्ठते, कम् + पते कम्पते, किम् + करोषि = किं करोषि वा किङ्करोषि, क्षिप्रम् + चलति = क्षिप्रं चलति वा क्षिप्रञ्चलति, नदीम् + तरति = नदीं तरति वा नदीन्तरति, गुरुम् + नमति = गुरुं नमति वा गुरुन्नमति।

(९)यदि पदान्त 'ङ्' 'ण्' 'न्' के पहले ह्रस्व स्वर हों और उनके बाद कोई भी स्वर हो तो वे अक्षर डबल हो जाते हैं। जैसे—प्रत्यङ् + आत्मा = प्रत्यङ्ङात्मा, सुगण् + ईश = सुगण्णीश, खन् + अश्नति = खन्नश्नति, धावन् + अश्व =

---

(८) अनुस्वारस्य ययि परसवर्णः। वा पदान्तस्य। (९) ङमो ह्रस्वादचि ङमुण्नित्यम्।

धावशश्व, हसन्+आगत=हसन्नागत, सृजन्+ईश्वर=सृजन्नीश्वर, स्मरन्+उवाच=स्मरन्नुवाच।

विसर्ग सन्धि।

(१)विसर्गके बाद वर्गका पहला दूसरा अक्षर और श, ष, स हो तो विसर्गका विसर्ग ही रह जाता है या कवर्गमें जिह्वामूलीय, पवर्गमें उपध्मानीय और तालव्य, मूर्धन्य, दन्त्य अक्षरोंमें उसी स्थानका श, ष, स हो जाता है। जैसे—रामः करोति राम≍करोति, रामः पचति राम≍पचति हरिः चन्द्र=हरिश्चन्द्र, धावित छागधावितश्छाग, भीतः टलति भीतष्टलति, स्थिरः ठक्कुरः स्थिरष्ठक्कुरः, उन्नतः तरुः उन्नतस्तरुः, छिन्नः थुत्कारः छिन्नस्थुत्कारः, रामः शेते रामश्शेते, रामः षष्ठः रामष्षष्ठः, रामः सरति रामस्सरति।

(२)यदि विसर्गसे पहले 'अ' हो और बादको 'अ' या कोई भी घोष व्यंजन होतो विसर्गका 'उ' हो जाता है ('उ' हो जाने पर स्वर सन्धिके बाद प्रयोगसिद्ध होते हैं)। जैसे—सः+अत्र=सोऽत्र शोभनः+गन्धः=शोभनो गन्धः, नूतनः+घटः=नूतनो घटः, सद्यः+जातः=सद्यो जातः, मधुरः+झङ्कारः=मधुरो झङ्कारः, नवः+डमरुः=नवो डमरुः, गजः+ढौकते=गजो ढौकते।

---

(१) कुप्वो≍क≍पौ च। वा शरि। (२) अतो रोरप्लुतादप्लुते। हशि च।

(३)यदि विसर्गके पहले 'अ' हो और उसके बाद 'अ' छोड़कर कोई भी स्वर हो और यदि विसर्गके पहले 'भो' 'भगो' 'अघो' और 'आ' हो और बादको कोई भी स्वर या घोष व्यञ्जन हो तो, विसर्गका लोप हो जाता है। जैसे—कुतः + आगतः = कुत आगतः, नरः + इव = नर इव, चन्द्रः + उदेति = चन्द्र उदेति, देवः + ऋषिः = देव ऋषि, भोः + अत्र = भो अत्र, भगोः + गच्छ, भगो गच्छ, अघोः + याहि = अघो याहि, अश्वाः + अमी = अश्वा अमी, गताः + इमे = गता इमे, ताराः + उदिताः = तारा उदिताः, नराः + एते = नरा एते, हताः + गजाः = हता गजाः, ।

(४)विसर्गके पहले 'अ' 'आ' के सिवाय कोई भी दूसरा स्वर हो और बादको कोई भी स्वर या घोष व्यञ्जन हो तो विसर्गका 'र्' हो जाता है परन्तु 'रेफ' सम्बन्धी विसर्गके पहले 'अ' हो तो भी उस विसर्गका र् हो जाता है। इस नियमसे होने वाले 'रेफ' के और स्वाभाविक 'रेफ' के बाद यदि रेफ हो तो पहले 'रेफ' का लोप होकर उसके पूर्व स्वरका दीर्घ हो जाता है। जैसे– कविः + अयम् = कविरयम्, गतिः + इयम् = गतिरियम्, रविः + उदेति = रविरुदेति, श्रीः + असौ = श्रीरसौ, पुनः + अपि = पुनरपि, निः + रोगः = निर् + रोगः = नीरोगः, पुनर् + रमते = पुनारमते ।

(५)'स' और 'एष' के बाद अ छोड़कर कोई भी स्वर या

३–भो भगो अघो अपूर्वस्य योऽशि । लोपः शाकल्यस्य । हलि सर्वेषाम् । ४–ससजुषो रुः । रो रि । ढ्रलोपे पूर्वस्य दीर्घोऽणः । ५–एतत्तदोः सुलोपो अकोरनञ्समासे हलि ।

व्यञ्जन परे हो तो विसर्गका लोपही हो जाता है। जैसे—सः+इह=स इह, सः+करोति=स करोति, मः+सरति=म सरति, एषः सरति=एष सरति, (सः+अत्र=सोऽत्र)।

शब्द

जो सुनाई देता है या जिससे कोई अर्थ प्रगट होता है उसे शब्द कहते हैं। उसके दो भेद हैं ध्वन्यात्मक (अव्यक्त) और वर्णात्मक (व्यक्त)।

(१) ध्वन्यात्मक—जिसमें वर्ण स्पष्ट नहीं सुनाई देते। जैसे—मेघका गड़गड़ाहट, घोड़ेका हिनहिनाना।

(२) वर्णात्मक—जिसमें वर्ण स्पष्ट सुनाई देते हैं या लिखे रहते हैं। जैसे—राम, गुण, देश इत्यादि।

ऐसे शब्द हिन्दी भाषामें चार प्रकारके हैं—
तत्सम, तद्भव, देशी, विदेशी।

(१) तत्सम—जो शब्द संस्कृतके समान ही हिन्दीमें प्रयुक्त होते हैं, उन्हें तत्सम कहते हैं। जैसे—नदी, राजा, प्रभु।

(२) तद्भव—जो शब्द संस्कृतके शब्दोंसे कुछ बिगड़कर हिन्दीमें प्रयुक्त होते हैं, उन्हें तद्भव कहते हैं। जैसे—खेत, दूध, हाथ। [संस्कृत—क्षेत्र, दुग्ध, हस्त]।

(३) देशी—जिनका स्वरूप संस्कृतके शब्दोंसे नहीं मिलता

तथा जो भारतकी भिन्न भिन्न बोलियोंसे आए हैं, वे देशी कहलाते हैं। जैसे—पेट, रोड़ा, पगड़ी।

(४) विदेशी—जो शब्द अंग्रेजी, अरबी, फारसी आदि विदेशी भाषाओंसे लिये गये हैं। जैसे—स्टेशन, इम्तिहान, चाकू, अक्ल।

व्युत्पत्तिके अनुसार शब्दोंके तीन भेद हैं—

रूढ़, यौगिक, योगरूढ़।

(१) रूढ़—जिन शब्दोंके खण्ड सार्थक न हों। जैसे—जल, बैल, इनके ज, ल, बै, ल—इन खण्डोंका कोई अर्थ नहीं, इसलिये ये रूढ़ शब्द हैं।

(२) यौगिक—जिनके खण्ड सार्थक हों। जैसे—देवालय देव+आलय सार्थक हैं, इसलिये यह यौगिक अर्थात् मेलसे बना शब्द है।

(३) योगरूढ़—जो शब्द यौगिक होने पर भी किसी विशेष अर्थमें प्रसिद्ध हो। जैसे—पङ्कज, अर्थात् कीचड़से पैदा होने वाला=कमल। कीचड़से तो कीड़े आदि भी पैदा होते हैं, परन्तु उन्हें पङ्कज नहीं कहा जाता, इसलिये यह यौगिक होते हुए भी रूढ़ होनेके कारण योगरूढ़ शब्द है।

रूप-परिवर्तनके अनुसार शब्दोंके दो भेद होते हैं—

विकारी और अविकारी।

(१) लिंग, वचन, कारक आदिके अनुसार जिन शब्दोंके रूप बदल जाते हैं वे विकारी कहलाते हैं। जैसे—

घोड़ा—घोड़ी, घोड़े, घोड़ोंको। मैं-हम, मुझे, हमें, हमारा।

(२) जिन शब्दोंके रूप नहीं बदलते वे अविकारी कहलाते हैं। जैसे—अब, तब, अहो! वृथा।

प्रयोगके अनुसार शब्दोंके पाँच भेद हैं—

संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण, क्रिया, अव्यय। (कोई कोई वैयाकरण अव्ययके क्रिया-विशेषण, समुच्चयबोधक, विस्मयादि बोधक ये तीन भेद भी यहाँ ही दे देते हैं)।

(१) संज्ञा—वस्तु, व्यक्ति, स्थान आदिके नाम बतानेवाले शब्द। जैसे—पुस्तक, सत्यदेव, काशी।

(२) सर्वनाम—संज्ञाके स्थानमें प्रयुक्त होनेवाले शब्द—तू, मैं, कौन।

(३) विशेषण—वस्तु, व्यक्ति, स्थान आदिकी विशेषता बतानेवाले शब्द—सुन्दर, मीठा, लाल, छोटा।

(४) क्रिया—व्यापारका बोध करानेवाले शब्द—आता है, मारेगा, पढ़िये।

(५) अव्यय—क्रियाकी विशेषता बताने वाले, शब्दों और वाक्योंमें परस्पर सम्बन्ध कराने वाले और आश्चर्य्य, हर्ष, दुःख प्रभृति अवस्थाओंके व्यञ्जक शब्द। जैसे—शीघ्र चलो। राम और श्याम, ओह! वाह, हाय! इत्यादि।

इनमेंसे संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण और क्रियाके रूपोंमें परिवर्तन होता है, इसलिये ये चार विकारी हैं और अव्ययमें परिवर्तन नहीं होता, इसलिये यह अविकारी है।

संज्ञाके भेद।

अर्थ-भेदसे संज्ञा-शब्द तीन प्रकारके होते हैं—

[1]व्यक्तिवाचक, जातिवाचक, भाववाचक।

(१) व्यक्तिवाचक—जिस संज्ञासे किसी एक ही व्यक्ति या वस्तुका बोध होता है, उसे व्यक्तिवाचक कहते हैं। जैसे—सामवेद, लाहौर, भारतवर्ष, एशिया।

(२) जातिवाचक—जिस संज्ञासे एक जातिके सब पदार्थोंका बोध होता है, उसे जातिवाचक कहते हैं। जैसे—पशु, धातु, सोना, बैल, पर्वत, नदी, सभा। (इसे समुदायवाचक भी कहते हैं)।

(३) भाववाचक—जिस संज्ञासे पदार्थोंके भाव गुण, दोष, व्यापार, आदि धर्मोंका बोध होता है, उसे भाववचक कहते हैं। जैसे—पशुत्व, मिठास, दौड़, कमी, भय, सत्य, विद्या। (स्पर्श न हो सकनेवाले अर्थको बताने वाली संज्ञा भाववाचक होती है)।

(क) जातिवाचक संज्ञाएँ जब सारे पदार्थोंको न बतलाकर एक ही पदार्थका बोध कराती हैं, तब वे व्यक्तिवाचक बन जाती

१—संस्कृतमें द्रव्य, जाति, गुण और क्रिया। यों शब्दके चार अर्थ मानकर अर्थभेदसे चार भेद मानते हैं। ये भेद सार्थक हैं, पर हिन्दीका ये भेद निरर्थक प्रतीत होते हैं। तौ भी व्यवहार होता आता है। इस कारण यहाँ ये ही भेद दिये हैं। मुझे ज्ञात होता है कि अँग्रेजीके कामन नाउन प्रापरनाउन ऐब्स्ट्रैक्ट नाउन, मैटरियलनाउन इत्यादि भेदोंके ये नकलमात्र हैं।

हैं। जैसे—पुरी (जगन्नाथ पुरी), गान्धीजी (महात्मा गान्धी), संवत् (विक्रमी संवत्), मालवीयजी (मदनमोहन मालवीय)।

(ख) व्यक्तिवाचक संज्ञाएँ जब किसी एक ही व्यक्तिको न बतला कर उसके विशेष गुणोंसे युक्त कई व्यक्तियोंका बोध कराती हैं, तब वे जातिवाचक बन जाती हैं। जैसे—हे प्रभो! हमारे घरोंमें भी सीताएँ उत्पन्न हों (सीतासदृश गुणोंसे युक्त कन्याएँ)। आजकल आर्योंमें कितने शिवाजी हैं (शिवाजीके समान वीर और नीतिज्ञ।

(ग) भाववाचक संज्ञाएँ जब पदार्थोंके धर्मोंको न बतलाकर पदार्थोंका बोध कराती हैं, तब ये जातिवाचक बन जाती हैं। जैसे—सब पहरावे ट्रङ्कसे निकाल कर गठरीमें बांध लो। (पहरनेके वस्त्र)।

भाववाचक संज्ञाएं तीन प्रकारके शब्दोंसे बनती हैं—

(१) जातिवाचक संज्ञासे—लड़कासे लड़कपन।

(२) विशेषणसे—सुन्दरसे सुन्दरता, मधुरसे मधुरता।

(३) क्रियासे—लड़नासे लड़ाई, शोधनासे शोधाई।

संज्ञा-विकार

संज्ञाओंके रूपोंमें लिङ्ग, वचन और कारकके द्वारा विकार होता है।

लिङ्ग

चिन्हको लिङ्ग कहते हैं। व्याकरणमें जिसके द्वारा पुरुष-जातिका या स्त्री जातिका बोध हो, उसे लिङ्ग कहते हैं। हिन्दीमें लिङ्ग दो है-पुँल्लिङ्ग और स्त्रीलिङ्ग। (संस्कृत और अंग्रेजीमें नपुमकलिङ्ग भी होता हैं)।

प्रायः मोटी, बेढङ्गी, रूखी और भारी वस्तुओंके नाम पुँल्लिङ्ग और पतली, छोटी, कोमल, सुन्दर, हलकी वस्तुओंके नाम स्त्रीलिङ्ग होते हैं। जैसे—

पु०—लट्ठ, लक्कड़, गट्ठा, रस्सा, कोल्हू, हल।

स्त्री०—लाठी, लकड़ी, गाड़ी, रस्सी, चक्की, सूई।

लिङ्गनिर्णय।

१—हिन्दीमें लिङ्गनिर्णय दो प्रकारसे होता है,—(१) शब्दके अर्थसे, (२) और उसके रूपसे।

२—प्राणिवाचक संज्ञाओंका लिङ्ग बहुधा अर्थके अनुसार और अप्राणिवाचक संज्ञाओंका लिङ्ग बहुधा रूपके अनुसार निश्चित करते हैं। जिन शब्दोंका लिङ्ग इन दोनो रीतियोसे निश्चित नहीं हो सकता, उनका लिङ्ग व्यवहारके अनुसार मानते हैं।

३—जिन प्राणिवाचक संज्ञाओंसे मिथुन (जोड़े) का ज्ञान होता है, उनको पुरुष-बोधक संज्ञाएँ पुँल्लिङ्ग और स्त्रीबोधक

संज्ञाएँ स्त्रीलिङ्ग होती हैं। जैसे,—पुरुष, घोड़ा, मोर आदि पुँल्लिङ्ग हैं और स्त्री, घोड़ी, मोरनी आदि स्त्रीलिङ्ग हैं।

अपवाद,—'सन्तान' और 'सवारी' (यात्री) स्त्रीलिङ्ग हैं। (शिष्ट लोगोंमें स्त्रीके लिये 'घरके लोग' ऐसा पुँलिङ्ग शब्द भी बोला जाता है।)

४—कई एक मनुष्येतर प्राणियोंके नामोंसे दोनोंका बोध होता है, पर वे व्यवहारके अनुसार केवल पुँ० या स्त्री० माने जाते हैं। जैसे,—पुँ०, पत्ती, उल्लू, कौवा, भेड़िया, चीता, खटमल तोता, कीड़ा, केचुआ, साँप, गिद्ध आदि। स्त्री०, चील कोयल, मैना, लावा, गिलहरी, गाह, जोंक, तितली, मक्खी मछली, दीमक आदि।

५—इनके नामोंके साथ पुरुषका बोध करानेके लिये "नर" और स्त्रीके बोधके लिये "मादा" शब्द भी लगाते हैं, परन्तु इन शब्दोंके कारण मूल शब्दोंके लिङ्गमें अन्तर नहीं पड़ता। जैसे,—बीस हजार मक्खियाँ उन निकम्मी नर मक्खियोंको खिलाकर शहद वृथा नहीं खोतीं।

६—प्राणियोंके समुदाय-वाचक संज्ञाएँ व्यवहारके अनुसार पुँ० या स्त्री० होती हैं। जैसे,—पुँ०—झुण्ड, कुटुम्ब, व्यक्ति, सङ्घ, ठट्ट, मण्डल, दल, मेला, कान्फ्रेंस इत्यादि। स्त्री०—भीड़, सेना, फौज, सभा, कमिटी, प्रजा, टोली, सरकार (मालिक पु०), पुलिस, गवर्न्मेंण्ट, बैठक, इत्यादि। 'समाज' शब्द पुँलिङ्गमें अधिक आता है; पर कोई कोई लेखक इसे स्त्रीलिङ्गमें भी लिखते हैं।

७—अप्राणिवाचक शब्दोंका लिङ्गनिर्णय प्रायः उनके रूपके अनुसार ही होता है; उनके कुछ खास नियम यहाँ दे दिये जाते हैं।

पुँल्लिङ्ग।

(क) शरीरके अवयवोंके नाम पुँल्लिङ्ग हैं—बाल, गाज (फेन) (बिजली स्त्री०), मस्तक, तालु, ओठ, दाँत, मुँह, कान, गाल, हाथ, पाँव, रोम, चूतड़, इत्यादि।

अपवाद—आँख, नाक, जाँघ, जीभ, जबान, बाँह, खाल, नस, कौंरा, भौंह, मूछ, गर्दन, इन्द्रिय इत्यादि।

(ख) रत्नोंके नाम—हीरा, मोती, माणिक, मूँगा, पन्ना इत्यादि।

अपवाद—मणि, चुन्नी, लालड़ी इत्यादि।

(ग) पेड़ोंके नाम—पीपल, बड़, सागौन, शीशम, देवदार, तमाल, अशोक, अद्रक इत्यादि।

अपवाद—नीम, जामुन, कचनार, ऊख सेम, इत्यादि।

(घ) अनाजोंके नाम—जौ, मटर, मक्का, तिल, उड़द इत्यादि।

अपवाद—जुआर, मूँग, अरहर इत्यादि।

(ङ) द्रवपदार्थोंके नाम—घी, तेल, पानी, खीर, दही, शर्बत, सिरका, इत्र, आसव, अवलेह इत्यादि।

अपवाद—छाछ, भील, फिर इत्यादि।

स्त्रीलिङ्ग।

(क) नदियोंके नाम स्त्रीलिंग होते हैं—गङ्गा, यमुना, इत्यादि।

(ख) तिथियोंके नाम--परिवा, दूज, तीज, चौथ, इत्यादि।

(ग) नक्षत्रोंके नाम—अश्विनी, भरणी, कृत्तिका, इत्यादि।

(घ) वर्णमालाके अक्षर-इ, ई, ऋ, अपवाद-ए, ऐ इत्यादि।

(ङ) किरानेका नाम—मिर्च, लौंग इत्यादि।

अपवाद—जिरा, तेजपात, कपूर, केसर इत्यादि।

हिन्दीमें संस्कृत अंग्रेजी और यावनी (फारसी) शब्द भी आते हैं, इसलिये इन भाषाओंके शब्दोंका अलग अलग विचार करनेमें सुभीता है।

---

१ हिन्दी शब्द।

पुँल्लिङ्ग।

(१) न्यूनताबोधक संज्ञाओंको छोड़ शेष हिन्दीकी आकारान्त संज्ञाएँ पुँल्लिङ्ग होती हैं—गन्ना, पैसा, पहिया, दरिया, इत्यादि।

(२) जिन भाववाचक संज्ञाओंके अन्तमें 'ना' 'आव' 'पन' और 'पा' होता है,—खाना, गाना, ताव चढ़ाव, बढ़ाव, बड़प्पन, बुढ़ापा, भैयापा इत्यादि।

(३) कृदन्तकी नकारान्त संज्ञाएँ, जिनका धातु नकारान्त न

हो और जिनका उपान्त्य वर्ण आकारान्त हो, लगान, मिलान, पान, गान, नहान, उठान, उड़ान, ब्यान, म्यान इत्यादि।

अपवाद—सान, आन, जान, खान इत्यादि।

स्त्रीलिंग।

(१) ईकारान्त संज्ञाएँ,—नदी, चिट्ठी, हड्डी, चीनी इत्यादि।

अपवाद—पानी, घी, मोती, जी, दही, हाथी इत्यादि।

(२) न्यूनताबोधक आकारान्त संज्ञाएँ, फुड़िया, खटिया, डिबिया, ठिलिया इत्यादि।

(३) तकारान्त संज्ञाएँ,—रात, बात, लात, छत, पत इत्यादि।

अपवाद—भात, खेत, सूत, सबूत, दाँत, गात इत्यादि।

(४) ऊकारान्त संज्ञाएँ,—बालू, लू, झाड़ू दारू, ब्यालू, आबरू इत्यादि।

अपवाद—आलू, तराजू, चाकू, लड्डू, डमरू, जनेऊ इत्यादि।

(५) अनुस्वारान्त संज्ञाएँ,—सरसों, भौं, दौं, चूं, लौं इ०।

अपवाद—गेहूँ इत्यादि।

(६) सकारान्त संज्ञाएँ,—प्यास, मिठास, रास (लगाम) बास (बू), पास, साँस इत्यादि।

अपवाद—निकास, रास (नृत्य) इत्यादि।

(७) कृदन्तकी नकारान्त संज्ञाएँ,—जिनका उपान्त्य वर्ण अकारान्त अथवा जिनका धातु नकारान्त हो,—सूजन, जलन, गढ़न, रहन, उलझन इत्यादि।

अपवाद—चलन, चाल चलन।

(८) कृदन्तकी अकारान्त संज्ञाएँ—लूट, मार, समझ, दौड़, सम्हाल, रगड़, चमक, छाप, पुकार, गन्ध, कल आदि।

अपवाद—नाच, खेल, मेल, बिगाड़, बोल, उतार इत्यादि।

(९) जिन संज्ञाओंके अन्तमें ख होता है,—ऊख, दाख, सीख, भीख, राख, आँख, काँख, कोख, परख, साख, चीख, देख, रेख आदि।

अपवाद=पाख, दख, सुख, नख आदि।

(१०) जिन भाववाचक संज्ञाओंके अन्तमें आई, हट, व होते हैं:—भलाई, चिल्लाहट, घबराहट, बनावट इत्यादि।

---

२ संस्कृत शब्द।

पुँल्लिङ्ग

(१) त्रान्त संज्ञाएँ पुँल्लिङ्ग होती हैं,—पात्र, चित्र इत्यादि।

(२) नान्त संज्ञाएँ,—पालन, पोषण, दमन इत्यादि।

अपवाद—पवन इत्यादि।

(३) जान्त संज्ञाएँ,—जलज, उरोज इत्यादि।

(४) जिनके अन्तमें त्व, त्य, व और य, हो—सतीत्व, कृत्य, लाघव, माधुर्य्य इत्यादि। अपवाद=सामर्थ्य इत्यादि।

(५) जिन संज्ञाओंके अन्तमें आर, आय या आस हो:—विकार, विस्तार, अध्याय, उल्लास, हास इत्यादि।

अपवाद—सहाय आय इत्यादि ।

(६)अ प्रत्ययान्त संज्ञाएँ:—क्रोध, मोह, महाभारत इत्यादि ।

अपवाद—शपथ, कुशल, सामर्थ, पुस्तक, जय, रामायण, ग्रन्थ, विनय, तरङ्ग इत्यादि ।

स्त्रीलिङ्ग ।

(१) आकारान्त संज्ञाएँ:—दया, शोभा, प्रार्थना इत्यादि ।

(२) उकारान्त संज्ञाएँ:—वायु, रज्जु, मृत्यु, आयु, वस्तु, बाहु, रेणु ।

अपवाद—ऋतु, जानु, मधु, अश्रु, तालु तरु, सेतु इत्यादि ।

(३) ति और ता प्रत्ययान्त,—गति, बुद्धि, कृति, नम्रता, जड़ता इत्यादि । अपवाद—देवता ।

(४) इकारान्त संज्ञाएँ:—विधि (तरीका) (दैव पु०), निधि, परिधि, राशि, अग्नि (आग), छवि, रुचि, केलि, बलि आदि ।

अपवाद—वारि, गिरि, जलधि, कृमि, पाणि इत्यादि ।

(५) इमा प्रत्ययान्त,—महिमा, गरिमा, लघिमा आदि ।

---

२ यावनी शब्द ।

पुँल्लिङ्ग ।

(१) जिन शब्दोंके अन्तमें 'आब' हो—गुलाब, हिसाब, असबाब, खिजाब, जवाब इत्यादि ।

अपवाद—शराब, गिद्दाब, किताब, किमख्वाब इत्यादि।

(२) जिनके अन्तमें आर या आन हो,—बाजार, इकरार, इजहार, इश्तिहार, इन्कार, एहसान, मकान, चालान इत्यादि।

अपवाद—सरकार (शासक-समूह), तकरार, दीवार दूकान, सान, थान, जान इत्यादि।

(३) जिनके अन्तमें ह हो,—(हिन्दीमें यह 'ह' बहुधा 'आ' होकर अन्त्य स्वरमें मिल जाता है।) पर्दा, गुस्सा, किस्सा, रास्ता, तम्बूरा, चश्मा, तमगा (हि० तगमा) इत्यादि।

अपवाद—दफा इत्यादि।

स्त्रीलिङ्ग।

(१) ईकरान्त भाव-वाचक संज्ञाएँ,—बीमारी, गरमी, गरीबी इत्यादि।

(२) शकारान्त संज्ञाएँ,—नालिश, कोशिश, लाश, तलाश, मालिश, ख्वाहिश, इत्यादि।

अपवाद—ताश, होश, बारिश, जोश, बालिश (तकिया) इत्यादि।

(३) तकारान्त संज्ञाएँ,—दौलत, कसरत, हजामत, अदालत, कीमत, मुलाकात, हालत, जमानत, लियाकत, दावत इ०।

अपवाद—दस्तखत, दरख्त, औसत, खत, सबूत, तख्त आदि।

(४) हकारान्त संज्ञाएँ,—राह, तरह, आह, सलाह, सुलह।

अपवाद—गवाह, गुनाह इत्यादि।

(५) आकारान्त संज्ञाएँ,—हवा, दवा, दगा, सज़ा, जमा (पुँजी), दुनिया, वला (हि० वलाय) इत्यादि। अपवाद—मज़ा।

(६) "तफईल" के वज़नकी संज्ञाएँ,—तसवीर, तहसील, जागीर, तसदीह, तासीर, तफसील, तमीज इत्यादि।

अपवाद—तावीज।

(७) हिन्दीमें लगभग तीन-चौथाई शब्द संस्कृतके हैं; जो तत्सम और तद्भव रूपमें आते हैं। संस्कृतके पुँल्लिङ्ग और नपुंसक लिङ्ग शब्द हिन्दीमें बहुधा पुँल्लिङ्ग होते हैं और स्त्रीलिङ्ग शब्द प्रायः स्त्रीलिङ्ग ही होते हैं; तथापि कई एक तत्सम और तद्भव शब्दोंका मूल लिङ्ग हिन्दीमें बदल गया है:—

तत्सम शब्द।

शब्द,—	सं० पुँ०	हिन्दी स्त्री०
अग्नि	"	"
जय	"	"
आत्मा	"	"
महिमा	"	"
देह	"	"
व्यक्ति	स्त्री०	पुँ०
तारा (नक्षत्र)	"	"
देवता	"	"
वस्तु	नपुं०	स्त्री०
पुस्तक	"	"

तद्भव शब्द ।

तत्सम	संस्कृत पुं०	तद्भव	हिन्दी स्त्री०
शपथ	"	सौंह	"
विन्दु	"	बूँद	"
तन्तु	"	ताँत	"
अक्षि	न०	आँख	"

(तत्सम शब्दोंका प्रयोग शास्त्री, पण्डित आदि विद्वान् बहुधा संस्कृतके लिङ्गानुसार ही करते हैं।)

(८) अरबी, फारसी आदि यावनी भाषाओंके शब्दोंमें भी इस तरह हिन्दीमें लिङ्गान्तरके कुछ उदाहरण पाये जाते हैं। जैसे,—"मुहावरत" अरबी स्त्रीलिङ्ग और "मुहाविरा" हिन्दी पुँल्लिङ्ग हो गया है।

(९) अंग्रेजी शब्दोंके सम्बन्धमें लिङ्गनिर्णयके लिये प्रायः अर्थ और रूप, दोनोंका विचार किया जाता है। कुछ शब्दोंको उसी अर्थके हिन्दी शब्दोंका लिङ्ग प्राप्त हुआ है —

अंग्रेजी	हिन्दी	पुं०	अं०	हिन्दी	स्त्री०
कोट	अंगरखा	"	कम्पनी	मण्डली	"
लेक्चर	व्याख्यान	"	फीस	दक्षिणा	"
वारण्ट	चालान	"	कमिटी	सभा	"
लैम्प	दिया	"	चेन	साँकल, साँकड़ी	"
बूट	जूता		स्टिक	छड़ी	"

(१०) कई एक शब्द आकारान्त होनेके कारण पुँल्लिङ्ग और ईकारान्त होनेके कारण स्त्रीलिङ्ग हुए हैं। जैसेः—सोडा, डेल्टा इत्यादि। स्त्रीलिङ्ग—चिमनी, गिनी, म्युनिसिपैलिटी इत्यादि।

(११) लालटेन, कल, रेल, मशीन, ट्राम, तोप, बन्दूक, मेज, टेबुल, डेस्क, लिस्ट, स्लेट, अपील, बोतल, मोटर, कौंसिल, पेंसिल, पुलिस, कांग्रेस, रिपोर्ट आदि स्त्रीलिङ्ग हैं।

(१२) अधिकांश सामासिक शब्दोंका लिङ्ग अन्त्य शब्दके लिङ्गके अनुसार होता है जैसेः–रसोईघर (पुँ०), धर्मशाला(स्त्री०), माँ-बाप (पुँ०), आब-हवा (स्त्री०), काँजी-हौस (पुँ०) इत्यादि।

(१३) सभी स्थानोंमें यह नियम नहीं लगता। "मन्दगति," यह शब्द केवल कर्मधारय समासमें स्त्रीलिङ्ग है। बहुव्रीहिमें विशेष्यके अनुसार होता हैं। जैसे.—मन्दमति बालक।

(१४) सभा, पत्र, पुस्तक और स्थानके व्यक्तिवाचक नामोंका लिङ्ग प्राय शब्दके रूपके अनुसार होता है। जैसेः— "महासभा" (स्त्री०), "महामण्डल" (पुँ०), "मर्य्यादा" (स्त्री०), "प्रभा" (स्त्री०), "प्रताप" (पुँ०), "भारतमित्र" (पुँ०), "रघुवंश" (पुँ०), महाभारत (पुँ०), आगरा (पुँ०), रामायण (स्त्री०), मथुरा (स्त्री०), प्रयाग (पुँ०), दिल्ली (स्त्री०)।

(१५) यूनानी, इबरानी, पुर्त्तगाली और तुरकी आदि भाषाओंके हिन्दीमें आये हुए जो शब्द हैं, उनका लिङ्ग निर्णय व्यवहारके अनुसार होता है। अब तो, अन्य भाषाओंके कितने ही शब्द हिन्दीके निज शब्दसे हो गये हैं।

पुँल्लिङ्ग शब्दोंसे स्त्रीलिङ्ग बनानेके कुछ नियम।

(१६) ई, इया, इन, नी, आनी, आइन प्रत्यय लगानेसे पुँल्लिङ्ग शब्द स्त्रीलिङ्ग बन जाते हैं। जैसे—

पुत्र	पुत्री	मामा	मामी
कुत्ता	कुतिया	बेटा	बिटिया
कहार	कहारिन	माली	मालिन
सिंह	सिंहनी	हाथी	हथिनी
देवर	देवरानी	खत्री	खत्रानी
पाँड़े	पड़ाइन	ओझा	ओझाइन

(१७) कुछ तत्सम शब्दोंमें अन्तिम 'अ'को 'आ' या 'ई' हो जाता है। जैसे—बाल बाला, पंडित पंडिता, नद नदी, तरुण तरुणी।

(१८) 'अक' अन्तवाले शब्दोंके, 'अक'को 'इका' हो जाता है। जैसे—लेखक लेखिका, पाठक पाठिका।

(१९) कई शब्दोंके स्त्रीलिङ्ग शब्द भिन्न होते हैं। जैसे—

पिता	माता	भाई	बहिन
पुरुष	स्त्री	राजा	रानी
वर	वधू	नर	मादा

वचन।

(१) विकारी शब्दोंके जिस रूपसे संख्याका बोध होता है, उसे वचन कहते हैं। हिन्दीमें वचन दो हैं—एकवचन और बहुवचन। (संस्कृतमें द्विवचन भी होता है)।

(२) विकारी शब्दोंके जिस रूपसे उसके एक पदार्थका बोध होताहै, उसे एकवचन कहते हैं। जैसे—बालक खेलता है। बालिका हँसती है।

(३) विकारी शब्दोंके जिस रूपसे उसके एकसे अधिक पदार्थोंका बोध होता है, उसे बहुवचन कहते हैं। जैसे--बच्चे जाते हैं। लड़कियाँ पढ़ती हैं।

(४) आदरके लिये एकवचनके स्थानमें बहुवचन आता है। जैसे—हरिश्चन्द्र बड़े सत्यवादी थे। महात्मा गान्धी बड़े त्यागी हैं।

(५) जातिवाचक शब्दोंमें बहुवचनके स्थानमें एकवचन भी प्रयुक्त होता है। जैसे—मनुष्य बड़ा स्वार्थी जीव है। अमेरिकामें बहुत रुपया है।

सविभक्तिक, निर्विभक्तिक, एकवचन तथा बहुवचन बनानेके कुछ नियम।

(१) बहुवचन बनाने वास्ते एकवचनके आगे सब, गण, लोग, वर्ग, जन, वृन्द-इत्यादि शब्द जोड़ देते हैं। जैसे: —

एकवचन	बहुवचन।	एकवचन	बहुवचन।
छात्र	छात्रसब।	मित्र	मित्रगण।
विद्वान	विद्वानलोग।	विद्यार्थी	विद्यार्थिवर्ग।
बुध	बुधजन।	छात्र	छात्रवृन्द।

(२) आकारान्त पुँल्लिङ्ग संज्ञाओंके अतिरिक्त, अन्य पुँल्लिङ्ग

संज्ञाएं निर्विभक्तिक बहुवचनमें तथा अन्य पुंल्लिङ्ग या स्त्रीलिङ्ग दोनों संज्ञाएँ सविभक्तिक एक वचनमें ज्योंके त्यों रहती हैं। जैसेः—मनुष्य है, मनुष्य हैं। विद्यार्थी है, विद्यार्थी हैं। मनुष्यने, मनुष्यको, विद्यार्थीने, विद्यार्थीको, कन्याने, कन्याको। इत्यादि।

(३) नाना दादा प्रभृति सम्बन्ध-बोधक संज्ञाओंके तथा चन्द्रमा, राजा, कर्त्ता प्रभृति संस्कृतके तद्भव शब्दोंके निर्विभक्तिक बहुवचन तथा सविभक्तिक एकवचन रूपोंमें विकार नहीं होता। जैसेः—रामका कोई नाना है ? रामके बहुत नाना हैं, नानाने नानाको देशका कोई राजा है ? बहुत राजा हैं, राजाने राजाको। इत्यादि।

(४) केवल अकारान्त स्त्रीलिङ्ग शब्दोंके निर्विभक्तिक कर्त्ताके बहुवचनमें 'अ' को 'एं' कर देते हैं और आकारान्त पुंल्लिङ्ग शब्दोंके निर्विभक्तिक कर्त्ताके बहुवचनमें तथा सभी कारकोंके सविभक्तिक एकवचनमें 'आ' को 'ए' कर देते हैं। जैसेः—बात, बातें। घास, घासें। लड़का, लड़के। लड़केने, लड़केको। इत्यादि।

(५) आ, उ, ऊ और औ अन्तवाले स्त्रीलिङ्ग शब्दोंके आगे 'एं' जोड़नेसे 'ऊ' को 'उ' कर देनेसे निर्विभक्तिक कर्त्ताके बहुवचन बनते हैं। जैसेः—लता, लताएं, वस्तु, वस्तुएं, बहू, बहुएं, गौ, गौएं। इत्यादि।

(६) इ और ई अन्तवाले स्त्रीलिङ्ग शब्दोंमें 'यां' जोड़नेसे और ई को इ कर देनेसे निर्विभक्तिक कर्त्ताके बहुवचन बनते हैं। जैसे—रुचि, रुचियाँ, नदी, नदियाँ। इत्यादि।

(७) या अन्तवाले स्त्रीलिङ्ग शब्दोंके निर्विभक्तक बहुवचनमें अनुस्वार करदेते हैं। जैसेः—डिबिया, डिबियाँ। इत्यादि।

(८) सविभक्तिक शब्दोंके बहुवचनमें निम्नलिखित परिवर्तन होते हैं:—

(९) दोनों लिङ्गोंके अकारान्त शब्दोंके 'अ' को तथा आ अन्तवाले पुंलिङ्ग और इया प्रत्ययान्त स्त्रीलिङ्ग शब्दोंके 'आ' को 'ओं' कर देनेसे जैसेः—मनुष्यको मनुष्योंको, बातको बातोंको, लड़केको लड़कोंको, डिबियाको डिबियोंको। इत्यादि।

(१०) उ, ऊ, ए, ऐ, ओ और औ अन्तवाले दोनों लिङ्गोंके शब्दोंके तथा आकारान्त स्त्रीलिङ्ग शब्दोंके एवं कर्ता, राजा, पिता प्रभृति अविकारी शब्दोंके आगे 'ओं' जोड़ देनेसे तथा 'ऊ' को 'उ' करदेनेसे जैसेः—साधुको साधुओंको, धेनुको धेनुओंको, बहूको बहुओंको, पाँड़ेको पाँड़ेओंको, कोदोको कोदोओंको, गौको गौओंको, मालाको मालाओंको, कर्ताको कर्ताओंको, राजाको राजाओंको। इत्यादि।

(११) इ और ई अन्तवाले दोनों लिङ्गोंके शब्दोंमें 'यों' जोड़नेसे और 'ई' को 'इ' करनेसे। जैसेः—पतिको पतियोंको, मालीको मालियोंको, सतीको सतियोंको, नदीको नदियोंको। इत्यादि।

(१२) संबोधनके एकवचन तथा बहुवचनमें उनकी विभक्तियोंके योगसे होनेवाले सभी विकार होते हैं। केवल अन्तवाला अनुस्वार उड़ा दिया जाता है। जैसेः—हे बालक, हे बालको, हे घोड़े, हे घोड़ो, हे माता, हे माताओ, हे मुनि, हे मुनियो।

(१३) एकवचनमें संस्कृतकी तरह भी सम्बोधनके रूप होते हैं। जैसे—हे मुने, हे बाले, हे परमात्मन्, हे प्रभो ! इत्यादि।

---

†कारक।

(१) संज्ञा या सर्वनाम के जिस रूपसे उसका सम्बन्ध (क्रिया द्वारा) वाक्यके दूसरे शब्दोंके साथ जाना जाता है, उसे, कारक, कहते हैं। जैसे—"रामने लेखनीसे कॉपी पर लिखा।" इस वाक्यमें (१) रामने, (२), लेखनीसे, (३) कॉपी पर—ये तीनों संज्ञाओंके रूप हैं। इनका सम्बन्ध आपसमें ('लिखा' क्रियाके द्वारा) सूचित होता है, अतः ये तीनों कारक हैं।

(२) संज्ञा या सर्वनामके आगे कारक प्रकट करनेके लिये जो 'ने, से' आदि चिह्न लगाये जाते हैं, उन्हें विभक्ति चिह्न कहते हैं।

(३) विभक्तिरहित शब्दोंको 'शब्द' और विभक्तिसहित शब्दोंको 'पद' कहते हैं। जैसे—मोहन (शब्द), मोहनको (पद)।

हिन्दीमें आठ कारक हैं। कारकोंके नाम और विभक्ति-चिह्न निम्नलिखित हैं—

---

† क्रियान्वयित्वम् कारकत्वम् = क्रियाके साथ साक्षात् या परम्परया किसी प्रकार भी सम्बन्ध रखनेवाले पदको कारक कहते हैं। संस्कृतमें छ ६ कारक हैं। सम्बन्धको कारक नहीं कहा जाता; क्योंकि उसका क्रिया से सम्बन्ध नहीं रहता, और सम्बोधनका कर्तामें ही अन्तर्भाव हो जाता है

(कारक)	(विभक्तियाँ)
(१) कर्त्ता	ने, (शून्य)
(२) कर्म	को
(३) करण	से, द्वारा, करके
(४) सम्प्रदान	को, के लिये
(५) अपादान	से
(६) सम्बन्ध	का, के, की, रा, रे, री, ना, ने, नी
(७) अधिकरण	में, पै, पर

(ये चिन्ह शब्दोंके अन्तमें लगाये जाते हैं।)

(८) सम्बोधन	हे, रे, अहो अजी, आदि

(ये विभक्तिचिह्न नहीं कहलाते, ये सम्बुद्धिव्यञ्जक अव्यय हैं और ये शब्दोंसे पहले आते हैं।)

कारकोंके लक्षण और उदाहरण

(१) कर्त्ता—शब्दके जिस रूपसे क्रियाके करने वालेका बोध होता है, उसे कर्त्ता कारक कहते हैं। जैसे:—राम सोता है। यहाँ 'सोना' क्रियाको करनेवाला राम है, अतः 'राम' कर्ता है।

(२) कर्म—जिस वस्तुपर कर्ताके व्यापारका फल पड़ता है, उसके बोध करानेवाले शब्दस्वरूपको कर्म कारक कहते हैं। जैसे:—राम श्यामको मारता है। यहाँ रामके 'मारना'-रूप व्यापारका फल श्याम पर पड़ता है, अतः 'श्यामको' यह कर्म है।

(३) करण—शब्दके जिस रूपसे क्रियाके साधनका बोध होता, है उसे करण कारक कहते हैं। जैसे—विद्यार्थी लेखनीसे लिखता है। यहाँ 'लिखना' क्रियामें लेखनी साधन है, अतः 'लेखनीसे' यह करण कारक है।

(४) सम्प्रदान—जिसके लिये क्रिया की जाती है, उसके बोध करानेवाले शब्दरूपको सम्प्रदान कहते हैं। जैसेः—रामने श्यामको पुस्तक दी। यहाँ 'देना' क्रिया श्यामके लिये की गयी है, इसलिये 'श्यामको' यह सम्प्रदान कारक है।

(५) अपादान—शब्दके जिस रूपसे पृथक्त्व, उद्गम और भय आदिका बोध होता है, उसे अपादान कहते हैं। जैसेः—वृक्षसे पत्ता गिरता है। गंगा हिमालयसे निकलती है। बालिका सिंहसे डरती है। इन वाक्योंमें 'वृक्षसे, हिमालयसे, सिंहसे' ये अपादान कारक हैं।

(६) [1]सम्बन्ध—शब्दके जिस रूपसे उस अर्थका सम्बन्ध किसी दूसरे पदार्थके साथ सूचित होता है, उसे सम्बन्ध कहते हैं। जैसेः—बालककी पुस्तक। यहाँ बालकका सम्बन्ध पुस्तकसे है, इसलिये 'बालककी' यह सम्बन्ध कारक है।

१—(संस्कृत पद्धतिके अनुसार 'सम्बन्ध' कारक नहीं है: किन्तु यह एक प्रकार का विशेषण है। जैसा कि विभक्ति विचार करते समय पृष्ठ ४ में कहा है। तो भी हिन्दीमें इसे भी कारकका स्थान मिल गया है। अतः यहाँ लिख दिया गया है।)

(७) अधिकरण—शब्दके जिस रूपसे आधारका बोध होता है, उसे अधिकरण कहते हैं। जैसे:—मेरे हाथमें रुपया है। यहाँ रुपयेका आधार हाथ है, इसलिए 'हाथमें' यह अधिकरण है।

(८) सम्बोधन—संज्ञाके जिस रूपसे किसीको पुकारना सूचित होता है, उसे सम्बोधन कहते हैं। जैसे:—हे दिनेश! इधर आ।

पुँल्लिङ्ग संज्ञाओंकी रूपावली।

अकारान्त

(कारक)	(एकवचन)	(बहुवचन)
कर्त्ता	बालक, बालकने	बालक, बालकोंने
कर्म	बालकको	बालकोंको
करण	बालकसे	बालकोंसे
सम्प्रदान	बालकको, के लिये	बालकोंको, के लिये
अपादान	बालकसे	बालकोंसे
सम्बन्ध	बालकका, के, की	बालकोंका, के, की
अधिकरण	बालकमें, पर	बालकोंमें पर
सम्बोधन	हे बालक !	हे बालको !

इसी प्रकार धनुष, वन, फल, छात्र, पुत्र। आदि पुलिङ्गके सभी अकारान्त शब्दोंके रूप होते हैं।

आकारान्त

कर्त्ता	लड़का, लड़केने	लड़के, लड़कोंने
कर्म	लड़केको	लड़कोंको
करण	लड़केसे	लड़कोंसे
सम्प्रदान	लड़केको, के लिये	लड़कोंको, के लिये
अपादान	लड़केसे	लड़कोंसे
सम्बन्ध	लड़केका, के, की	लड़कोंका, के, की
अधिकरण	लड़केमें, पर	लड़कोंमें, पर
सम्बोधन	हे लड़के !	हे लड़को !

इसी प्रकार घोड़ा, बच्चा, घड़ा, गढ़ा, पहिया आदि अन्य सब विकारी आकारान्त पुंलिङ्ग शब्दोंके रूप होते हैं।

अविकारी आकारान्त

कर्त्ता	विधाता, विधाताने	विधाता, विधाताओंने
कर्म	विधाताको	विधाताओंको
करण	विधातासे	विधाताओंसे
सम्प्रदान	विधाताको, के लिये	विधाताओंको, के लिये
अपादान	विधातासे	विधाताओंसे
सम्बन्ध	विधाताका, के, की	विधाताओंका, के, की
अधिकरण	विधातामें, पर	विधाताओंमें, पर
सम्बोधन	हे विधाता !	हे विधाताओ !

इसी प्रकार राजा, देवता, कर्त्ता, चन्द्रमा आदि अन्य सब अविकारी आकारान्त पुंलिङ्ग शब्दोंके रूप होते हैं।

इकारान्त

कर्त्ता	मुनि, मुनिने	मुनि, मुनियोंने
कर्म	मुनिको	मुनियोंको
करण	मुनिसे	मुनियोंसे
सम्प्रदान	मुनिको, के लिये	मुनियोंको, के लिये
अपादान	मुनिसे	मुनियोंसे
सम्बन्ध	मुनिका, के, की	मुनियोंका, के, की
अधिकरण	मुनिमें, पर	मुनियोंमें, पर
सम्बोधन	हे मुनि, हे मुने !	हे मुनियो !

इसी प्रकार पति, कपि आदि अन्य सब इकारान्त पुँल्लिङ्ग शब्दोंके रूप होते हैं।

ईकारान्त

कर्त्ता	माली, मालीने	माली, मालियोंने
कर्म	मालीको	मालियोंको
करण	मालीसे	मालियोंसे
सम्प्रदान	मालीको, के लिये	मालियोंको, के लिये
अपादान	मालीसे	मालियोंसे
सम्बन्ध	मालीका, के, की	मालियोंका, के, की
अधिकरण	मालीमें, पर	मालियोंमें, पर
सम्बोधन	हे माली !	हे मालियो !

इसी प्रकार धोबी, नाई, भाई, धनी आदि अन्य सब ईकारान्त पुँलिङ्ग शब्दोंके रूप होते हैं।

उकारान्त

कर्त्ता	गुरु, गुरुने	गुरु, गुरुओंने
कर्म	गुरुको	गुरुओंको
करण	गुरुसे	गुरुओंसे
सम्प्रदान	गुरुको, के लिये	गुरुओंको, के लिये
अपादान	गुरुसे	गुरुओंसे
सम्बन्ध	गुरुका, के, की	गुरुओंका, के, की
अधिकरण	गुरुमें, पर	गुरुओंमें, पर
सम्बोधन	हे गुरु, हे गुरो !	हे गुरुओ !

इसी प्रकार साधु, भानु आदि अन्य सब उकारान्त पुँल्लिङ्ग संज्ञाओंके रूप होवे हैं।

ऊकारान्त

कर्त्ता	डाकू, डाकूने	डाकू, डाकुओंने
कर्म	डाकूको	डाकुओंको
करण	डाकूसे	डाकुओंसे
सम्प्रदान	डाकूको, के लिये	डाकुओंको, के लिये
अपादान	डाकूसे	डाकुओंसे
सम्बन्ध	डाकूका, के, की	डाकुओंका, के, की
अधिकरण	डाकूमें, पर	डाकुओंमें पर
सम्बोधन	हे डाकू !	हे डाकुओ !

इसी प्रकार वायू आदि अन्य सब ऊकारान्त पुँल्लिङ्ग संज्ञाओंके रूप होते हैं।

एकारान्त

कर्त्ता	दुवे, दुवेने	दुवे, दुवेओंने
कर्म	दुवेको	दुवेओंको
करण	दुवेसे	दुवेओंसे
सम्प्रदान	दुवेको, के लिये	दुवेओंको, के लिये
अपादान	दुवेसे	दुवेओंसे
सम्बन्ध	दुवेका, के, की	दुवेओंका, के की
अधिकरण	दुवेमें, पर	दुवेओंमें, पर
सम्बोधन	हे दुवे !	हे दुवेओ !

इसी प्रकार, चौबे आदि अन्य सब एकारान्त तथा ऐ, ओ, और औ अन्तवाली संज्ञाओंके रूप होते हैं।

स्त्रीलिङ्ग संज्ञाओंकी रूपावली

अकारान्त

(कारक)	(एकवचन)	(बहुवचन)
कर्त्ता	बात, बातने	बातें, बातोंने

शेष अकारान्त पुल्लिङ्ग शब्दोंकी तरह। इसी प्रकार आँख, बहिन, रात आदि अकारान्त स्त्रीलिङ्ग शब्दोंके रूप होते हैं।

आकारान्त

कर्त्ता	माता, माताने	माताएं, माताओंने

शेष राजा आदि अविकृत आकारान्त पुल्लिङ्ग शब्दोंकी तरह।

इसी प्रकार लता, पाठशाला आदि आकारान्त स्त्रीलिङ्ग शब्दोंके रूप होते हैं।

इयाप्रत्ययान्त

कर्त्ता कुण्डलिया, कुण्डलियाने कुण्डलियाँ, कुण्डलियोंने

शेष आकारान्त स्त्रीलिङ्ग शब्दोंकी तरह। इसी प्रकार डिबिया खड़िया आदि इयाप्रत्ययान्त स्त्रीलिङ्ग शब्दोंके रूप होते हैं।

इकारान्त

कर्त्ता शक्ति, शक्तिने शक्तियाँ, शक्तियोंने

शेष इकारान्त पुल्लिङ्ग शब्दोंकी तरह। इसी प्रकार भक्ति, मति, रति, बुद्धि आदि इकरान्त स्त्रीलिङ्ग शब्दोंके रूप होते हैं।

ईकारान्त

कर्त्ता रानी, रानीने रानियाँ, रानियोंने

शेष ईकरान्त पुल्लिङ्ग शब्दोंकी तरह। इसीप्रकार नदी, देवी, भाभी, सखी, नानी आदि ईकारान्त स्त्रीलिङ्ग शब्दोंके रूप होते हैं।

उकारान्त

कर्त्ता धेनु, धेनुने धेनुएं, धेनुओंने

शेष उकारान्त पुल्लिङ्ग शब्दोंकी तरह।

ऊकारान्त

कर्त्ता बहू, बहूने बहुएं, बहुओंने

शेष ऊकारान्त पुल्लिङ्ग शब्दोंकी तरह। इसी प्रकार कुरु-जोरू, वधू आदि ऊकारान्त स्त्रीलिङ्ग शब्दोंके रूप होते हैं।

ओकारान्त

कर्त्ता गौ, गौने गौएं, गौओंने

शेष एकारान्त या औकारान्त पुल्लिङ्ग शब्दोंकी तरह।

सर्वनाम

जो विकारी शब्द संज्ञाओंकी पुनरुक्तिको दूर करनेके लिये उनके बदले आते हैं, उन्हें सर्वनाम कहते हैं। जैसेः—रामने अपनी मातासे कहा कि, मैं पढ़ने जा रहा हूँ। इस वाक्यमें 'अपनी' 'मैं' ये सर्वनामोंके रूप हैं।

पुरुष

बोलचाल या लेखमें सांसारिक पदार्थोंका जो तीन तरहका सम्बन्ध होता है, उसे पुरुष कहते हैं। इसीलिये पुरुष तीन प्रकारके होते हैं। उत्तम, मध्यम और अन्य (प्रथम) पुरुष।

(१) उत्तम पुरुष स्वयं बोलने या लिखने वाला, जैसेः— मैं, हम।

(२) मध्यमपुरुष सुनने या पढ़ने वाला, जैसे—तू, तुम।

(३) अन्य(प्रथम)पुरुष शेष सब सर्वनाम हैं, जैसेः—वह, यह, आप (आदरसूचक) सो, जो, कौन, क्या, कोई और कुछ। एक निज (स्वयं) वाचक 'आप' शब्द है। जैसेः—मैं आप ही करलूँगा। तुम आप ही करो। वह आप ही चला जायगा। इस प्रकार 'आप' तीनों पुरुषों और वचनोंमें आताहै। (अंग्रेजीमें उत्तम-पुरुषको फर्स्टपर्शन और प्रथमपुरुषको थर्डपर्शन कहते हैं।)

सर्वनामोंका विकार

सर्वनामोंमें वचन और कारकके अनुसार विकार होता है लिङ्गके अनुसार नहीं होता। अंग्रेजीमें इसे कमनजेन्डर कहते हैं

'मैं, तू, यह, वह' इन शब्दोंके रूप विभक्तिरहित कर्त्ता कारकके बहुवचनमें क्रमश हम, तुम, ये, वे होते हैं। और विशेषण तथा विभक्तियोगमें क्रमश एकवचनमें मुझ, तुझ इस, उस और बहुवचनमें हम, तुम, इन, उन हो जाते हैं।

सम्बन्ध कारकमें मैं और तू शब्दोंके रूपोंके साथ का, के, की के स्थान पर रा, रे, री विभक्ति चिह्न लगते हैं। सर्वनामोंका सम्बोधन नहीं होता। इनके रूप इस प्रकार होते हैं—

सर्वनामोंकी रूपावली

मैं (अस्मद्)

(कारक)	(एकवचन)	(बहुवचन)
कर्त्ता	मैं, मैंने	हम, हमने
कर्म	मुझको, मुझे	हमको, हमें
करण	मुझसे	हमसे
सम्प्रदान	मुझको, मुझे	हमको, हमें
अपादान	मुझसे	हमसे
सम्बन्ध	मेरा, मेरे, मेरी	हमारा, हमारे, हमारी
अधिकरण	मुझमें, पर	हममें, पर

यह

(कारक)	(एकवचन)	(बहुवचन)
कर्ता	यह, इसने	ये, इन्होंने
कर्म	इसको, इसे	इनको, इन्हे
करण	इससे	इनसे
सम्प्रदान	इसको, इसे, इसके लिये।	इनको, इन्हें, इनके लिये
अपादान	इससे	इनसे
सम्बन्ध	इसका, के, की	इनका, के, की
अधिकरण	इसमे, पर	इनमें, पर

वह

कर्ता	वह, उसने	वे, उन्होंने
कर्म	उसको, उसे	उनको, उन्हे
करण	उससे	उनसे
सम्प्रदान	उसे, उसको, केलिये।	उन्हे, उनको, केलिये
अपादान	उससे	उनसे
सम्बन्ध	उसका, के, की	उनका, के, की
अधिकरण	उसमे, पर	उनमें, पर

कोई

कर्ता	कोई, किसीने	कोई, किन्हींने
कर्म	किसीको	किन्हींको
करण	किसीसे	किन्हीं से
सम्प्रदान	किसीको, केलिये	किन्हींको, केलिये

(कारक)	(एकवचन)	(बहुवचन)
अपादान	किसीसे	किन्हींसे
सम्बन्ध	किसीका, के, की	किन्हीका, के, की
अधिकरण	किसीमें, पर	किन्हींमें, पर

कई विद्वान् 'कोई' शब्दके बहुवचनके रूप नहीं मानते। 'कुछ' शब्दका कोई विकार नहीं होता।

जो

कर्ता	जो, जिसने	जो, जिन्होंने
कर्म	जिसको, जिसे	जिनको, जिन्हें
करण	जिससे	जिनसे
सम्प्रदान	जिसे, जिसको, केलिये	जिन्हें, जिनको, केलिये
अपादान	जिससे	जिनसे
सम्बन्ध	जिसका, के, की	जिनका, के, की
अधिकरण	जिसमें, पर	जिनमें, पर

कौन

कर्ता	कौन, किसने	कौन, किन्होंने
कर्म	किसको, किसे	किनको किन्हें
करण	किससे	किनसे
सम्प्रदान	किसे, किसको, केलिये।	किन्हें किनको, केलिये
अपादान	किससे	किनसे
सम्बन्ध	किसका, के, की	किनका, के, की
अधिकरण	किसमें, पर	किनमें, पर

आप (आदरसूचक)

(कारक)	(एकवचन)	(बहुवचन)
कर्ता	आप, आपने	आप, आपलोग, आपलोगोंने
कर्म	आपको	आपको, आपलोगोंको
करण	आपसे	आपसे, आपलोगोंसे
सम्प्रदान	आपको, केलिये	आपको, आपलोगोंको, केलिये
अपादान	आपसे	आपसे, आपलोगोंसे
सम्बन्ध	आपका, के, की	आपका, आपलोगोंका, के, की
अधिकरण	आपमें, पर	आपमें, आपलोगोंमें, पर

आप (निजवाचक)

(कारक)	(एकवचन)
कर्ता	आप
कर्म	अपनेको
करण	अपनेसे
सम्प्रदान	अपनेको, केलिये
अपादान	अपनेसे
सम्प्रदान	अपना, ने, नी
अधिकरण	अपनेमें, पर

'अपना' और 'आप' शब्दोंको मिलाकर 'अपने आप, अपने आपको, अपने आपसे' आदि रूप भी होवे हैं।

विशेषण

जिन विकारी शब्दोंसे पदार्थोंकी विशेषता प्रकट होती है, उन्हें

विशेषण कहते हैं। जैसे—मीठा केला। यहाँ 'मीठा' शब्दसे केलाकी विशेषता प्रकट होती है। अतः 'मीठा' शब्द विशेषण है।

विशेषणों द्वारा जिन पदार्थोंकी विशेषता प्रकट की जाती है, उनके वाचक संज्ञाओंको विशेष्य कहते हैं। 'मीठा केला' में 'केला' विशेष्य है।

विशेषण-भेद

विशेषण चार प्रकारके होते हैं—

गुणवाचक, परिमाणवाचक, संख्यावाचक और निर्देशक।

१—पदार्थोंके रंग, आकार, गुण आदि प्रकट करने वाले विशेषणोंको गुणवाचक कहते हैं। जैसे—लाल, गोल, बुरा, भला इत्यादि।

२—पदार्थोंके परिमाण (माप) बतलाने वाले विशेषणोंको परिमाणवाचक कहते हैं। जैसे—छटांक, सेर इत्यादि।

३—पदार्थोंकी संख्या प्रकट करने वाले विशेषण संख्यावाचक कहलाते हैं। जैसे—एक, दो, तीन, अनेक इत्यादि।

४—जिनसे संकेत या निर्देश प्रकट होता है, उन्हें निर्देशक' विशेषण कहते हैं। जैसे—यह घोड़ा, वह हाथी, ऐसा व्यक्ति, वैसी बातें। इनमें 'यह' से समीपताका और 'वह' से दूरीका संकेत प्रकट होता है तथा 'ऐसा' से 'व्यक्ति' और 'वैसा' से 'बात' के लिये निर्देश प्रकट होता है। इनके रूप सर्वनामोंसे बनते हैं, इसलिये इन्हें सार्वनामिक विशेषण भी कहते हैं।

तुलना

पदार्थोंके गुण या दोष बतलानेको तुलना कहते हैं। तुलनाके विचारसे विशेषणोंकी तीन अवस्थाएँ होती हैं—

मूलावस्था, उत्तरावस्था और उत्तमावस्था।

१—मूलावस्थामें दूसरे पदार्थोंके साथ गुणों या दोषोंका मिलान नहीं किया जाता। जैसे—बलदेव चतुर है।

२—उत्तरावस्थामें दो वस्तुओंका मिलान करके एकको अधिक बतलाया जाता है। जैसे—मोहन रमेशसे अधिक चतुर है।

३—उत्तमावस्थामें दोसे अधिक वस्तुओंका मिलान करके एकको औरोंसे अधिक बतलाया जाता है। जैसे—सोहन सबसे चतुर है।

(उत्तरावस्था और उत्तमावस्था प्रकट करनेके लिये विशेषणोंके आगे क्रमशः 'तर' और 'तम' प्रत्यय भी लगाते हैं। जैसे—प्रियतर, मृदुतर, दृढ़तर। प्रियतम, मृदुतम, दृढ़तम।

सम्बन्धकारक और आकारान्त विशेषण।

सम्बन्ध कारक एक प्रकारका विशेषण है, जो 'विभक्ति-प्रयोगमें मतभेद' वाले प्रकरणमें कहा गया है। सम्बन्ध कारकके एकवचनान्त रूपको आकारान्त विशेषण समझना चाहिए। इसलिये जो विकार आकारान्त विशेषणमें हैं, वे ही वहाँ भी होंगे। उसके नियम यहाँ दिये जाते हैं—

१—यदि सम्बन्धी और विशेष्य विभक्तिरहित पुँल्लिङ्ग एकवचन हों तो, सम्बन्धकारकके चिन्ह तथा आकारान्त विशेषण ज्योंके त्यों रहते हैं। जैसे—रामका बड़ा घोड़ा कहाँ है?

२—यदि सम्बन्धी और विशेष्य स्त्रीलिङ्ग हैं तो, सम्बन्ध कारकके चिन्ह और विशेषणमें ईकार हो जाता है। जैसे—उनकी बड़ी बहन विदुषी हैं।

३—यदि सम्बन्धी और विशेष्य पुँल्गि बहुवचन, पुँल्लिङ्ग विभक्तिसे युक्त एकवचन और पुँल्लिङ्ग आदरणीय विभक्तिसे शून्य एकवचन रहें तो, सम्बन्धकारक और विशेषणमें एकार हो जाता है। जैसे—रामके बड़े लड़के आये हैं। अपने छोटे छातेसे मारो। आपके बड़े चाचाजी आये हैं।

४—यदि कोई अव्यय तथा योग्य, अधीन, ऊपर, नीचे आदि शब्द रहें तो, सम्बन्धकारकका चिन्ह ए हो जाता है। जैसे—मेरे यहाँ आओ। उनके योग्य वह काम है, इत्यादि।

———

क्रियारूप।

जिसके अन्तमें ना हो और जिसका अर्थ व्यापार और फल हो, वही क्रियाका सामान्य रूप है।

धातुके आगे 'ना' प्रत्यय लगानेसे क्रियाका सामान्यरूप बनता है। जैसे—'लिख' से लिखना, 'जा' से जाना, 'पढ़' से पढ़ना। क्रियाका सामान्यरूप संज्ञाके समान ही प्रयुक्त होता

है। जैसे—प्रातःकालका 'पढ़ना' बहुत लाभदायक है। 'लिखने' से ही तो लेखक बनता है। क्रिया सकर्मक-अकर्मक भेदसे दो प्रकारकी होती है।

सकर्मक और अकर्मक

जिन क्रियाओंके व्यापारका फल कर्त्ताको छोड़कर कर्मपर रहता है, वे सकर्मक होती हैं। जैसे—राम चावल पकाता है, कमला पत्र लिखती है।

जिन क्रियाओंके व्यापार और फल कर्त्तामें ही रहते हैं, वे अकर्मक होती हैं। जैसे राम हँसता है। कमला दौड़ती है।

जब अकर्मक क्रियाओंके व्यापारको कर्म बनाकर उनके साथ जोड़ देते हैं, तब वे भी सकर्मक बन जाती हैं। जैसे—वह चालें चलता है। वह लम्बी दौड़ दौड़ती है। सकर्मक क्रियाएँ दो प्रकार की होती हैं—

एककर्मक और द्विकर्मक

एककर्मकमें एक ही कर्म होता है। जैसे—वह पत्र पढ़ता है।

द्विकर्मकमें दो कर्म होते हैं। जैसे—वह मुझे व्याकरण पढ़ाता है। तुमने मुझे कथा सुनाई। यहाँ रेखाङ्कित पद अप्रधान कर्म और उससे आगेका पद प्रधान या मुख्य कर्म है। इस प्रकार दो कर्म होनेसे पढ़ाना आदि क्रियाएं द्विकर्मक होती हैं।

संयुक्त क्रियाएँ

'पढ़, कर, लिख' आदि मूल धातुओंसे बनने वाली 'करता है' 'पढ़ता है', 'लिखता है' आदि क्रियाएँ मूल क्रियाएँ कहलाती हैं।

'कर चुक, पढ़ सक, लिख दे' आदि दो दो धातुओंसे बनने वाली 'कर चुका है', 'पढ़ सकता है', 'लिख देता है' आदि क्रियाएँ संयुक्त क्रियाएँ कहलाती हैं।

संयुक्त क्रियाओंमें पहली क्रिया मुख्य होती है और दूसरी क्रिया उसके साथ मिलकर उसके अर्थमें कुछ विशेषता उत्पन्न कर देती है। जैसे—मैं पढ़ सकता हूँ। इस वाक्यमें मुख्य क्रियाका अर्थ केवल 'पढ़ना' है। 'सक' के मिलनेसे 'पढ़नेकी शक्ति रखता हूँ' इस विशेष अर्थका बोध होता है।

नामधातु

शब्दोंमें प्रत्यय जोड़नेसे भी धातु बनते हैं। उन्हें नामधातु कहते हैं। नाम शब्दका अर्थ है संज्ञा। जो संज्ञाएँ धातु बन जाती हैं, उनको नामधातु कहते हैं। जैसे—'हाथ' संज्ञासे 'हथियाना' नामधातु बनाकर—'हथियाता है' आदि रूप बनाते हैं।

(शब्द)	(नामधातु)
खर्च	खर्चना
रँग	रँगना
दाग	दागना
अपना	अपनाना

प्रेरणार्थक क्रियाएँ

कर्त्ता जिन क्रियाओंको स्वयं न करके किसी दूसरेको उसे करनेकी प्रेरणा करता है, उन क्रियाओंको प्रेरणार्थक कहते हैं। जैसे—माता धाईसे बालकको सुलवाती है । मैं तुमसे पत्र लिखवाता हूँ ।

प्रेरणार्थक क्रिया वाले वाक्यमें प्रेरणा करने वालेको प्रयोजक कर्त्ता कहते हैं और जिसको प्रेरणा की जाती है, उसे प्रयोज्य कर्त्ता कहते हैं। दूसरी प्रेरणामें प्रयोजक कर्त्ताकारकमें और प्रयोज्य करणकारकमें आता है । जैसे—राम पढ़ता है (साधारण), कुमुद रामको पढ़ाती है (पहली प्रेरणा), माता कुमुदसे रामको पढ़वाती है (दूसरी प्रेरणा)। यहाँ माता प्रयोजककर्त्ता है, जो कर्त्ताकारकमें है और कुमुद प्रयोज्यकर्त्ता है, जो करणकारकमें है ।

प्रेरणार्थक बनानेके नियम

मूलधातुके अन्तमें 'आ' जोड़नेसे पहली प्रेरणार्थक और 'वा' जोड़नेसे दूसरी प्रेरणार्थक क्रियाएँ बनती हैं और दो अक्षरोंके धातुओंमें 'ऐ' और 'औ' को छोड़ अन्य पहले दीर्घ स्वरको ह्रस्व कर देते हैं। जैसे—

(सामान्यरूप)	(पहली प्रेरणा)	(दूसरी प्रेरणा)
समझना	समझाना	समझवाना
लिखना	लिखाना	लिखवाना

(सामान्यरूप)	(पहली प्रेरणा)	(दूसरी प्रेरणा)
जागना	जगाना	जगवाना
घूमना	घुमाना	घुमवाना
भूलना	भुलाना	भुलावना

अकर्मकसे सकर्मक बनानेके नियम

१. दो अक्षरोंके धातुओंके पहले स्वरको और तीन अक्षरोंके धातुओंके दूसरे स्वरको दीर्घ करनेसे अकर्मकसे सकर्मक धातु बनते हैं। जैसे—

(अकर्मक)	(सकर्मक)	(अकर्मक)	(सकर्मक)
लदना	लादना	निकलना	निकालना
कटना	काटना	उखड़ना	उखाड़ना

२ कुछ दो अक्षरोंके धातुओंमें पहले 'इ' का 'ए' और 'उ' का 'ओ' हो जाता है। जैसे—

घिरना	घेरना	खुलना	खोलना
दिखना	देखना	घुलना	घोलना

पूर्वकालिक क्रिया

जो क्रिया मुख्य क्रियाके व्यापारसे पहले हो चुकनेवाले किसी व्यापारका विधान करती है और मुख्य क्रियाके अधीन होती है, उसे पूर्वकालिक क्रिया कहते हैं। यह प्रायः मुख्य क्रियासे पहले आती है।

धातुके आगे 'कर' या 'के' लगानेसे पूर्वकालिक क्रिया बनती है। जैसे—मैं पढ़कर खाता हूँ, वह जाकर पत्र भेजेगा, तू सोके ही रहा न! कोलाहल करके ही छोड़ा न!

क्रिया–विकार

क्रियाओंमें काल, लिङ्ग, वचन, पुरुष और वाच्य आदिके कारण विकार होते हैं। जैसे—

काल—मनुष्य सोता था, मनुष्य सोता है, मनुष्य सोयेगा।

लिङ्ग—रमेश जाता है, रमा जाती है।

वचन—बालिका लिखती है, बालिकाएँ लिखती हैं।

पुरुष—मैं गाता हूँ, तुम गाते हो, वह गाता है।

वाच्य—वीरसिंह लाठी चलाता है, वीरसिंहसे लाठी चलाई गयी है।

काल

जिस रूपसे क्रियाके होनेका समय जाना जाता है, उसे काल कहते हैं। काल तीन प्रकारके होते हैं—भूत, वर्तमान, भविष्यत्।

भूतकाल—जिस रूपसे बीते हुए समयमें क्रियाका होना पाया जाय, उसे भूतकाल कहते हैं। जैसे—मोहन गया, राधाने रोटी पकाई।

वर्तमानकाल—जिस रूपसे बीतते हुए समयमें क्रियाका होना पाया जाय, उसे वर्तमानकाल कहते हैं। जैसे—श्रीकेसरिकृष्ण आता है, बन्दीकृष्ण पढ़ रहा है।

भविष्यत्काल—जिस रूपसे आनेवाले समयमें क्रियाका होना पाया जाय, उसे भविष्यत्काल कहते हैं। जैसे—अध्यापिका जायगी।

कालोंका उपभेद

भूतकालके छः भेद हैं—सामान्यभूत, आसन्नभूत, पूर्णभूत, अपूर्णभूत, सन्दिग्धभूत, हेतुहेतुमद्भूत।

सामान्यभूत—जिस रूपसे क्रियाके बीते हुए समयके किसी विशेष भागका निश्चय नहीं होता, उसे सामान्यभूत कहते हैं। जैसे—वह गया, उसने लिखा।

आसन्नभूत—जिस रूपसे निकटमें ही (अभी अभी) क्रियाका समाप्त होना पाया जाय, उसे आसन्नभूत कहते हैं। जैसे—वह गया है, उसने लिखा है।

पूर्णभूत—जिस रूपसे दूरवर्ती बीते हुए समयमें क्रियाका होना पाया जाय, उसे पूर्णभूत कहते हैं। जैसे—वह फल लाया था, मैंने पत्र पढ़ा था।

अपूर्णभूत—जिस रूपसे क्रियाका बीते हुए समयमें होना तो पाया जाय, पर पूरा होना न पाया जाय, उसे अपूर्णभूत कहते हैं। जैसे—अर्जुन पढ़ता था, तुम जाते थे।

सन्दिग्धभूत—जिस रूपसे बीते हुए समयमें होने वाली क्रियामेंसन्देह पाया जाय, उसे सन्दिग्धभूत कहते हैं। जैसे—उसने कहा होगा, तू रहा होगा।

हेतुहेतुमद्भूत—क्रियाके जिस रूपसे बीते हुए समयमें एक क्रियाके न होनेके कारण दूसरी क्रियाका न होना पाया जाय, उसे हेतुहेतुमद्भूत कहते हैं। हेतुहेतुमद्भूत दो प्रकारका होता है-पूर्ण और अपूर्ण। पूर्णहेतुहेतुमद्भूत, जैसे—तुमने पत्र लिखा होता तो उसने उत्तर अवश्य दिया होता। अपूर्णहेतुहेतुमद्भूत, जैसे—बादल आते तो वर्षा होती, बादल आते होते तो वर्षा होती रहती।

वर्तमानकालके दो भेद हैं—सामान्यवर्तमान और संदिग्धवर्तमान।

सामान्यवर्तमान—जिस रूपसे बीतते हुए समयमें सामान्यतया क्रियाका होना पाया जाय, उसे सामान्यवर्तमान कहते हैं। जैसे—तू लिखता है, वह खाता है।

संदिग्धवर्तमान—जिस रूपसे बीतते हुए समयमें होने वाली क्रियामें सन्देह पाया जाय, उसे संदिग्धवर्तमान कहते हैं। जैसे—उमेश पढ़ता होगा, दिनेश सोता होगा।

भविष्यत्कालके दो भेद हैं—सामान्यभविष्यत् और सम्भाव्यभविष्यत्।

सामान्यभविष्यत—जिस रूपसे आने वाले समयमें सामान्यतया क्रियाका होना पाया जाय, उसे सामान्यभविष्यत् कहते हैं। जैसे—कमला आयगी। राघवेन्द्र लिखेगा।

सम्भाव्यभविष्यत्—जिस रूपसे आने वाले समयमें क्रियाके होनेमें सम्भावना पाया जाय, उसे सम्भाव्यभविष्यत् कहते हैं। जैसे—सम्भव है आज वर्षा हो।

लिङ्ग, वचन, पुरुष

संज्ञाके समान क्रियाके भी दो लिङ्ग होते हैं—पुँल्लिङ्ग और स्त्रीलिङ्ग। जैसे—घोड़ा दौड़ता है, गौएं चरती हैं।
वचन भी दो होते हैं—एकवचन और बहुवचन। जैसे—बच्चा रोता है, बच्चे हँसते हैं।

पुरुष तीन होते हैं—उत्तमपुरुष, मध्यमपुरुष और अन्यपुरुष। 'मैं' और 'हम' के साथ आने वाली क्रिया उत्तमपुरुष, 'तू' और 'तुम' के साथ आने वाली क्रिया मध्यमपुरुष और अन्य सब सर्वनामों और संज्ञाओंके साथ आने वाली क्रिया अन्यपुरुष होती है। जैसे—मैं जाता हूँ, हम जाते हैं (उत्तमपुरुष)। तू जाता है, तुम जाते हो, (मध्यमपुरुष)। वह जाता है, वे जाते हैं, वृक्ष बढ़ता है, वृक्ष बढते हैं (अन्यपुरुष)।

वाच्य

वाक्यमें क्रिया द्वारा किये गये विधानका प्रधान विषय कर्ता, कर्म या भाव होता है, यह क्रियाके जिस रूपसे जाना जाय, उसे वाच्य कहते हैं।

भाव शब्दसे धातुका अर्थ लिया जाता है। जैसे—'चला नहीं जाता' इसमें 'चलना' भाव है, जो 'चल' धातुका अर्थ है।

वाच्य तीन प्रकारके हैं—कर्तृवाच्य, कर्मवाच्य और भाववाच्य।

कर्तृवाच्य—जिस वाक्यमें क्रिया द्वारा किये गये विधानका प्रधान विषय कर्ता हो, उसे कर्तृवाच्य कहते हैं।

कर्तृवाच्यमें कर्ताकी प्रधानता होती है और अकर्मक क्रियाओंके किसी भी भूतकालमें कर्ताके साथ विभक्ति चिह्न नहीं लगता, इसलिये कर्ताके अनुसार ही क्रिया होती है। परन्तु सकर्मक क्रियाओंके कर्तृवाच्यमें भी सामान्य, आसन्न, पूर्ण, पूर्णहेतुहेतुमद् और सन्दिग्ध भूतोंमें कर्ताके सविभक्तिक हो जानेके कारण विभक्तिरहित कर्मके अनुसार क्रिया होती है। सविभक्तिक कर्म होनेपर केवल एकवचन पुँल्लिङ्ग अन्यपुरुषकी क्रिया होती है। जैसे—मैं गया, कान्ता आयी, मैंने पुस्तक पढ़ी, उसने पानी पिया था, हमने पत्रको पढ़ा, उसने चिट्ठियोंको लिखा, तू पढ़ता है, चन्द्रमा अस्त हो जायगा।

(कर्तृवाच्य सकर्मक और अकर्मक दोनों क्रियाओंमें होता है। इसमें कर्ताका उल्लेख अवश्य रहता है।)

कर्मवाच्य—जिस वाक्यमें क्रिया द्वारा किये गये विधानका प्रधान विषय कर्म हो, उसे कर्मवाच्य कहते हैं।

कर्मवाच्यमें कर्मकी प्रधानता रहती है। इसलिये क्रियाके लिङ्ग वचन, पुरुष कर्मके अनुसार होते हैं और कर्ता करणकारकमें आता है; परन्तु विभक्तिसहित कर्म होनेपर क्रिया पुँल्लिङ्ग, एकवचन और अन्यपुरुषमें आती है। जैसे—तुमसे पत्र पढ़ा गया, मुझसे चिट्ठी लिखी गयी, नारंगी खायी गयी, बालकोंको भड़काया गया, श्रीकेशरिकृष्णसे संस्कृत पढ़ी जाती है।

कर्मवाच्य केवल सकर्मक क्रियाओंमें होता है। इसमें कर्मका उद्देश अवश्य रहता है।

भाववाच्य—जिस वाक्यमें क्रिया द्वारा किये गये विधानका प्रधान विषय भाव हो, उसे भाववाच्य कहते हैं।

भाववाच्यमें धातुका अर्थ प्रधान होता है, कर्ता या कर्म प्रधान नहीं होता। इसमें क्रिया सदा पुँल्लिंग, एकवचन और अन्यपुरुषमें रहती हैं और कर्ता करणकारकमें आता है। जैसे—उससे सब चला गया, अब आया जाता नहीं, उससे जाया जायगा, मुझसे आया नहीं जायगा। (यह केवल अकर्मक क्रियाओंमें होता है।)

"ने" का प्रयोग।

१—सकर्मक क्रियाओंके सामान्य, आसन्न, सन्दिग्ध, पूर्ण, और पूर्णहेतुहेतुमद् (अन्तरित हेतुहेतुमद्) भूतोंके कर्तामें "ने" चिह्न आता है, कर्मका चिह्न न होने पर क्रिया कर्मके अनुसार होती है तथा जब कर्मका चिह्न रहता है तो, क्रिया पुँल्लिङ्ग एकवचन होती है। जैसे,—रामने पुस्तक पढ़ी, पढ़ी है, पढ़ी होगी, पढ़ी थी, पढ़ी होती। उसने घोड़ोंको देखा,—है, —होगा,—था,—हो,—होता।

२—अपूर्ण, और अपूर्ण हेतुहेतुमद् भूतोंमें, अकर्मक क्रियाओंमें तथा बोलना, बकना, भूलना, सुनना, लाना, जनना

आदि सकर्मक धातुओंमें, उन सामान्यादि भूतोंके रहने पर भी, कर्ताका "ने" चिन्ह नहीं आता है। इस दशामें क्रिया कर्ताके अनुसार होती है। जैसे—राम देखता था, राम देखता होता तो, मैं जाता। राम आया,—आया है,—होगा—था,—होता। वह बोला,—है,—होगा,—था,—होता। घोड़ी बछेड़ा जनी,—है, —होगी,—थी,—होती इत्यादि।

३—यदि संयुक्त क्रियाओंमें भी, अन्तमें, कोई अकर्मक क्रिया हो वा पाना, करना आदि सकर्मक क्रियाएँ हों, पौनः-पुन्य अर्थ जताने वाले संयुक्त धातु हों और यदि पुकार धातुमें कर्म न हो तो, कर्तामें "ने" नहीं लगता। जैसे,—वह उसे देख आया,—है,—होगा,—था,—होता। वह मेरे दस रुपये खा बैठा,—है,—होगा,—था,—होता। इसी तरह ले भागा इत्यादि। वह पुस्तक पढ़ पाया,—है,—होगा—था,—होता। वह रात भर बैठे २ पढ़ा किया। वह सारी बातें सुना किया? आप वहाँ क्या, किया किये। कोतवाल साहब पुकारे। (कर्म रहने पर कोतवालने सिपाहीको पुकारा)।

४—संयुक्त क्रियाओंके अन्तमें सकर्मक क्रिया रहने पर भी "ने" का प्रयोग नहीं होता है; यदि वह संयुक्त क्रिया अकर्मक रहे। जैसे,—जब मानसिंह चढ़ आये तो, पठानोंकी सेना चल दी। जब सम्राट् आये तो, सब सरदार तैयार हो लिये थे। जब वह चलने लगे तो, हम भी साथ हो लिये। इत्यादि। किसी २ के सिद्धान्तसे 'उसने हँस दिया' आदि प्रयोग भी शुद्ध हैं।

५—समझना, सोचनामें विकल्पसे "ने" लगता है। जैसे,—वह यह बात सोचा, समझा। उसने यह बात सोची, समझी।

सा० आ० सं० पू० भूतमें क्रिया सकर्मक माँहि।
कर्तृवाच्यमें सर्वदा 'ने' हो, अन्यत्र नाँहि॥

क्रियाओंके रूप बनानेके नियम।

सामान्यभूत—यदि धातुके अन्तमें 'अ' हो तो 'आ' कर देनेसे। जैसे—पढ़—पढ़ा, चल—चला, लिख—लिखा, इत्यादि। यदि 'आ' या 'ओ' हो तो उसमें या जोड़नेसे। जैसे—आना—आया, खाना—खाया, रोना—रोया, इत्यादि। यदि 'ई' या 'ए' हो तो उनकी जगह इया जोड़ देनेसे। जैसे—पीना—पिया, देना—दिया इत्यादि। यदि 'ऊ' हो तो 'ऊ' को 'उ' करके 'आ' जोड़ देनेसे सामान्यभूतकी क्रियाएँ बनती हैं। जैसे—चूना—चुआ, छूना—छुआ, इत्यादि।

आसन्नभूत—सामान्यभूतके उत्तम पुरुषके एक वचनमें 'हूँ', मध्यम पुरुष और अन्य पुरुषके एकवचनमें 'है', सिर्फ मध्यम पुरुषके बहुवचनमें 'हो' और अन्य बहुवचनोंमें हैं, लगा देनेसे आसन्नभूतकी क्रियाएँ बनती हैं। जैसे—मैं आया हूँ, हम आये हैं, तू आया है तुम आये हो, वह आया है, वे आये हैं, इत्यादि।

पूर्णभूत—सामान्यभूतमें 'था, थी, थे, थीं लगा देनेसे पूर्णभूतकी क्रियाएँ बनती हैं। जैसे—राम गया था, सीता *गयी थी (या) गयीं थीं, वे सब गये थे, स्त्रियाँ गयी थीं, इत्यादि।*

सन्दिग्धभूत—सामान्य भूतकालमें 'होगा, होंगे, होगी, होंगी' जोड़ देनेसे सन्दिग्धभूतकी क्रियाएँ बन जाती हैं। जैसे—पढ़ा होगा, पढी होगी, पढ़े होंगे, पढ़ी होंगी।

अपूर्णभूत—धातुके अन्तमें 'ता था, ती थी, ते थे, ती थीं (या) रहा था, रही थी, रहे थे, रही थीं' के जोड़नेसे अपूर्णभूतकी क्रियाएँ बनती हैं। जैसे—पढ़ धातुसे पढ़ता था, पढ़ती थी, पढ़ते थे, पढ़ती थीं, पढ़ रहा था, पढ़ रही थी, पढ़ रहे थे, पढ़ रही थीं, इत्यादि।

हेतुहेतुमद्भूत—धातुके अन्तमें 'ता, ती, ते, तीं' लगा देनेसे हेतुहेतुमद्भूतकी क्रियाएँ बनती हैं जैसे—वह आता, आती, वे आते, आतीं।

सामान्यवर्त्तमान—हेतुहेतुमद्भूतके आगे आसन्नभूतके नियमानुसार 'हूँ, है, हो हैं' लगा देनेसे सामान्यवर्त्तमानकी क्रियाएँ बनती हैं। जैसे—जाता हूँ, जाते हैं, जाता है, वे जाते हैं। (स्त्री) जाती है (कोई कोई वैयाकरण सामान्यवर्त्तमानको तात्कालिक वर्त्तमान या अपूर्ण वर्त्तमान मानते हैं और धातुके आगे रहा हूँ इत्यादि चिह्न लगाते हैं। जैसे—जारहा हूँ, जारही हूँ, इत्यादि)।

सन्दिग्धवर्त्तमान—हेतुहेतुमद्भूतके आगे 'होगा, होगी, होंगे, होंगी' जोड़ देनेसे सन्दिग्धवर्त्तमानकी क्रियाएँ बनती हैं। जैसे—जाता होगा, जाती होगी, जाते होंगे, जाती होंगी, आदि।

सामान्यभविष्यत्—सम्भाव्यभविष्यत् कालकी क्रियाके आगे 'गा, गे, गी' रूप जोड़नेसे सामान्यभविष्यत् कालकी क्रिया

बनती हैं जैसे—पढ़ूँगा, पढ़ेंगे, पढ़ेगा, पढ़ोगे, पढ़ेगा, पढ़ेंगे। (स्त्री) पढ़ूंगी, इत्यादि।

सम्भाव्यभविष्यत्—अकारान्त धातुके 'अ' के बदले क्रमशः 'ऊँ, एँ, ए, ओ, ए, एँ' प्रत्यय कर देनेसे और शेष धातुओंके आगे लगानेसे सम्भाव्यभविष्यत् कालकी क्रियाएँ बनती हैं। जैसे—मैं पढ़ूँ, हम पढ़ें, तू पढ़े, तुम पढ़ो, वह पढ़े, वे पढ़ें। (प्रवर्तनार्थक क्रियाएँ भी ऐसी ही बनती हैं। सिर्फ मध्यमपुरुषके एकवचनमें कोई प्रत्यय नहीं लगता। जैसे—मैं बोलूँ, हम बोलें तू बोल, तुम बोलो, वह बोले, वे बोलें, प्रवर्तनार्थकको विधि भी कहते हैं। 'आप' शब्दके साथ आदरविधि होती है अकारान्त धातुके 'अ' को 'इये' करनेसे और शेष धातुओंके आगे 'इये' लगानेसे आदरविधि बनती है। जैसे—बोलिये, जाइये।) पूर्वकालिक क्रिया बनाते समय धातुके आगे 'कर' या 'के' लगाते हैं। जैसे—पढ़कर, पढ़के, इत्यादि।

क्रियाओंकी रूपावली।

अकर्मक 'उठ' धातु कर्तृवाच्य।

सामान्यभूत

कर्ता पुँल्लिङ्ग			कर्ता स्त्रीलिङ्ग		
(पुरुष)	(एकवचन)	(बहुवचन)	(पुरुष)	(एकवचन)	(बहुवचन)
उ०	मैं उठा	हम उठे	उ०	मैं उठी	हम उठीं
म०	तू उठा	तुम उठे	म०	तू उठी	तुम उठीं
अ०	वह उठा	वे उठे	अ०	वह उठी	वे उठीं

आसन्नभूत

मैं उठा हूँ	हम उठे हैं	मैं उठी हूँ	हम उठी हैं
तू उठा है	तुम उठे हो	तू उठी है	तुम उठी हो
वह उठा है	वे उठे हैं	वह उठी है	वे उठी हैं

पूर्णभूत

मैं उठा था	हम उठे थे	मैं उठी थी	हम उठी थीं
तू उठा था	तुम उठे थे	तू उठी थी	तुम उठी थीं
वह उठा था	वे उठे थे	वह उठी थी	वे उठी थीं

अपूर्णभूत

मैं उठता था	हम उठते थे	मैं उठती थी	हम उठती थीं
तू उठता था	तुम उठते थे	तू उठती थी	तुम उठती थीं
वह उठता था	वे उठते थे	वह उठती थी	वे उठती थीं

सन्दिग्धभूत

मैं उठा हूँगा	हम उठे होंगे	मैं उठी हूँगी	वह उठी होंगी
तू उठा होगा	तुम उठे होगे	तू उठी होगी	तुम उठी होंगी
वह उठा होगा	वे उठे होंगे	वह उठी होगी	वे उठी होंगी

पूर्णहेतुहेतुमद्भूत

मैं उठा होता	हम उठे होते	मैं उठी होती	हम उठी होतीं
तू उठा होता	तुम उठे होते	तू उठी होती	तुम उठी होतीं
वह उठा होता	वे उठे होते	वह उठी होती	वे उठी होतीं

अपूर्णहेतुहेतुमद्भूत

मैं उठता, उठता होता। हम उठते, उठते होते	मैं उठती, उठती होती। हम उठतीं, उठतीं होतीं
तू उठता, उठता होता। तुम उठते, उठते होते	तू उठती, उठती होती। तुम उठतीं, उठती होतीं
वह उठता, उठता होता। वे उठते, उठते होते	वह उठती, उठती होती। वे उठतीं उठती होतीं

सामान्यवर्त्तमान

मैं उठता हूँ	हम उठते हैं	मैं उठती हूँ	हम उठती हैं
तू उठता है	तुम उठते हो	तू उठती है	तुम उठती हो
वह उठता है	वे उठते हैं	वह उठती है	वे उठती हैं

सन्दिग्धवर्तमान

मैं उठता हूँगा	हम उठते होंगे	मैं उठती हूँगी	हम उठती होंगी
तू उठता होगा	तुम उठते होंगे	तू उठती होगी	तुम उठती होंगी
वह उठता होगा	वे उठते होंगे	वह उठती होगी	वे उठती होंगी

सामान्यभविष्यत्

मैं उठूँगा	हम उठेंगे	मैं उठूँगी	हम उठेंगी
तू उठेगा	तुम उठोगे	तू उठेगी	तुम उठोगी
वह उठेगा	वे उठेंगे	वह उठेगी	वे उठेंगी

सम्भाव्यभविष्यत् (या प्रवर्त्तना विधि)

स्त्रीलिङ्ग पुंल्लिङ्गमें कोई अन्तर नहीं।

मैं उठूँ हम उठें। तू उठे तू उठ (विधि)। तुम उठो आप उठिये।

(आदर विधि) वह उठे वे उठें पूर्वकालिक—उठकर।

अकर्मक 'उठ' धातु भाववाच्य

(दोनों लिङ्गोंमें एकसे रूप होते हैं)

सामान्यभूत—मुझसे, हमसे, तुझसे, तुमसे, उससे, उनसे उठा गया। आसन्नभूत—उठा गया है। पूर्णभूत—उठा गया था। अपूर्णभूत—उठा जाता था। सन्दिग्धभूत—उठा गया होगा। पूर्णहेतुहेतुमद्भूत—उठा गया होता। अपूर्णहेतुहेतुमद्भूत—उठा जाता या उठा जाता होता। सामान्यवर्तमान—उठा जाता है। सन्दिग्धवर्तमान—उठा जाता होगा। सामान्यभविष्यत्—उठा जायगा। सम्भाव्यभविष्यत्—या (विधि) उठा जाय।

सकर्मक 'लिख' धातु कर्तृवाच्य

सामान्यभूत (कर्म पुल्लिङ्ग स्त्रीलिङ्ग दोनों हैं)

मैंने हमने तूने तुमने उसने उन्होंने सब 'ने' लगने वाले भूतोंमें लगेगा। लिखा। लिखे। लिखी। लिखीं।

आसन्नभूत

लिखा है। लिखे हैं। लिखी है। लिखी हैं।

पूर्णभूत

लिखा था। लिखे थे। लिखी थी। लिखी थीं।

सन्दिग्धभूत

लिखा होगा। लिखे होंगे। लिखी होगी। लिखी होंगी।

पूर्णहेतुहेतुमद्भूत

लिखा होता। लिखे होते। लिखी होती। लिखी होतीं।

अपूर्णभूत

(कर्ता पुँल्लिङ्ग)		(कर्ता स्त्रीलिङ्ग)	
मैं लिखता था	हम लिखते थे	मैं लिखती थी	हम लिखती थीं
तू लिखता था	तुम लिखते थे	तू लिखती थी	तुम लिखती थीं
वह लिखता था	वे लिखते थे	वह लिखती थी	वे लिखती थीं

अपूर्णहेतुहेतुमद्भूत (कर्ता पुँल्लिङ्ग)।

मैं लिखता, लिखता होता	हम लिखते, लिखते होते
तू लिखता, लिखता होता	तुम लिखते, लिखते होते
वह लिखता, लिखता होता	वे लिखते, लिखते होते

(कर्ता स्त्रीलिङ्ग)।

मैं लिखती, लिखती होती	हम लिखतीं, लिखती होतीं
तू लिखती, लिखती होती	तुम लिखतीं लिखती होतीं
वह लिखती, लिखती होती	वे लिखतीं, लिखती होतीं

सामान्यवर्तमान।

कर्ता पुंल्लिङ्ग		कर्ता स्त्रीलिङ्ग	
मैं लिखता हूँ	हम लिखते हैं	मैं लिखती हूँ	हम लिखती हैं
तू लिखता है	तुम लिखते हो	तू लिखती है	तुम लिखती हो
वह लिखता है	वे लिखते हैं	वह लिखती है	वे लिखती हैं

सन्दिग्धवर्तमान

(कर्ता पुल्लिङ्ग)		(कर्ता स्त्रीलिङ्ग)	
मैं लिखता हूँगा	हम लिखते होंगे	मैं लिखती हूँगी	हम लिखती होंगी
तू लिखता होगा	तुम लिखते होगे	तू लिखती होगी	तुम लिखती होगी
वह लिखता होगा	वे लिखते होंगे	वह लिखती होगी	वे लिखती होंगी

सामान्यभविष्यत्

(कर्ता पुंलिङ्ग)		(कर्ता स्त्रीलिङ्ग)	
मैं लिखूँगा	हम लिखेंगे	मैं लिखूँगी	हम लिखेंगी
तू लिखेगा	तुम लिखोगे	तू लिखेगी	तुम लिखोगी
वह लिखेगा	वे लिखेंगे	वह लिखेगी	वे लिखेंगी

सम्भाव्यभविष्यत् (प्रवर्तना, विधि)

दोनों लिङ्गोंमें

मैं लिखूँ, हम लिखें. तू लिखे (तू लिख, विधि) तुम लिखो; वह लिखे, वे लिखें। आदर विधि–लिखिये। पूर्वकालिक–लिखकर, के।

सकर्मक 'लिख' धातु कर्मवाच्य

सामान्यभूत

(मुझसे, हमसे, तुझसे, तुमसे, उससे, उनसे, सबके साथ समझना चाहिये।)

कर्म पुंल्लिङ्ग		कर्म स्त्रीलिङ्ग	
मैं लिखा गया	हम लिखे गये	मैं लिखी गयी	हम लिखी गयीं
तू लिखा गया	तुम लिखे गये	तू लिखी गयी	तुम लिखी गयीं
वह लिखा गया	वे लिखे गये	वह लिखी गयी	वे लिखी गयीं

आसन्नभूत

मैं लिखा गया हूँ	हम लिखे गये हैं	मैं लिखी गयी हूँ	हम लिखी गयी हैं
तू लिखा गया है	तुम लिखे गये हो	तू लिखी गयी है	तुम लिखी गयी हो
वह लिखा गया है	वे लिखे गये हैं	वह लिखी गयी है	वे लिखी गयी हैं

पूर्णभूत (कर्म पुँल्लिङ्ग)

मैं लिखा गया था	हम लिखे गये थे
तू लिखा गया था	तुम लिखे गये थे
वह लिखा गया था	वे लिखे गये थे

(कर्म स्त्रीलिङ्ग)

मैं लिखी गयी थी	हम लिखी गयी थीं
तू लिखी गयी थी	तुम लिखी गयी थीं
वह लिखी गयी थी	वे लिखी गयी थीं

अपूर्णभूत (कर्म पुँल्लिङ्ग)

मैं लिखा जाता था	हम लिखे जाते थे
तू लिखा जाता था	तुम लिखे जाते थे
वह लिखा जाता था	वे लिखे जाते थे

(कर्म स्त्रीलिङ्ग)

मैं लिखी जाती थी	हम लिखी जाती थीं
तू लिखी जाती थी	तुम लिखी जाती थीं
वह लिखी जाती थी	वे लिखी जाती थीं

सन्दिग्धभूत (कर्म पुँल्लिङ्ग)

मैं लिखा गया हूँगा	हम लिखे गये होंगे

तू लिखा गया होगा	तुम लिखे गये होगे
वह लिखा गया होगा	वे लिखे गये होंगे

(कर्म स्त्रीलिङ्ग)

मैं लिखी गयी हूँगी	हम लिखी गयी होंगी
तू लिखी गयी होगी	तुम लिखी गयी होंगी
वह लिखी गयी होगी	वे लिखी गयी होंगी

पूर्णहेतुहेतुमद् (कर्म पुँल्लिङ्ग)

मैं लिखा गया होता	हम लिखे गये होते
तू लिखा गया होता	तुम लिखे गये होते
वह लिखा गया होता	वे लिखे गये होते

(कर्म स्त्रीलिङ्ग)

मैं लिखी गयी होती	हम लिखी गयी होतीं
तू लिखी गयी होती	तुम लिखी गयी होतीं
वह लिखी गयी होती	वे लिखी गयी होतीं

अपूर्णहेतुहेतुमद्भूत (कर्म पुँल्लिङ्ग)

मैं लिखा जाता	हम लिखे जाते
तू लिखा जाता	तुम लिखे जाते
वह लिखा जाता	वे लिखे जाते

(कर्म स्त्रीलिङ्ग)

मैं लिखी जाती	हम लिखी जातीं
तू लिखी जाती	तुम लिखी जातीं
वह लिखी जाती	वे लिखी जातीं

सामान्यवर्तमान (कर्म पुँलिङ्ग)

मैं लिखा जाता हूँ	हम लिखे जाते हैं
तू लिखा जाता है	तुम लिखे जाते हो
वह लिखा जाता है	वे लिखे जाते हैं

(कर्म स्त्रीलिङ्ग)

मैं लिखी जाती हूँ	हम लिखी जाती हैं
तू लिखी जाती है	तुम लिखी जाती हो
वह लिखी जाती है	वे लिखी जाती हैं

सन्दिग्धवर्तमान (कर्म पुँल्लिङ्ग)

मैं लिखा जाता हूँगा	हम लिखे जाते होंगे
तू लिखा जाता होगा	तुम लिखे जाते होंगे
वह लिखा जाता होगा	वे लिखे जाते होंगे

(कर्म स्त्रीलिङ्ग)

मैं लिखी जाती हूँगी	हम लिखी जाती होंगी
तू लिखी जाती होगी	तुम लिखी जाती होंगी
वह लिखी जाती होगी	वे लिखी जाती होंगी

सामान्यभविष्यत् (कर्म पुँल्लिङ्ग)

मैं लिखा जाऊँगा	हम लिखे जाएँगे
तू लिखा जायगा	तुम लिखे जाओगे
वह लिखा जायगा	वे लिखे जायेंगे

(कर्म स्त्रीलिङ्ग)

मैं लिखी जाऊँगी	हम लिखी जाएँगी

सम्भाव्यभविष्यत् (कर्मपुँल्लिङ्ग)

मैं लिखा जाऊँ	हम लिखे जायें
तू लिखा जाय, तू लिखा जा (विधि)	तुम लिखे जाओ
वह लिखा जाय	वे लिखे जायें

(कर्म स्त्रीलिङ्ग)

मैं लिखी जाऊँ	हम लिखी जायें
तू लिखी जाय, तू लिखी जा(विधि)	तुम लिखी जाओ
वह लिखी जाय	वे लिखी जायें

आदरविधि—आप लिखे जाइये, आप लिखी जाइये।

(इसी प्रकार अन्य क्रियाओंके रूप होते हैं।)

'हो' धातु

'हो' धातुके दो अर्थ होते हैं—उत्पत्ति और विद्यमानता। जैसे—होता है, (अर्थात् उत्पन्न होता है;) है, (अर्थात् विद्यमान है)। इनके रूपोंमें केवल पूर्णभूत और सामान्यवर्तमान कालमें भेद होता है। जैसे—सामान्य—हुआ, हुए। आसन्न—हुआ है, हुए हैं। पूर्ण—हुआ था, था हुए थे, थे। अपूर्णभूत - होता था, होते थे। सन्दिग्ध—हुआ होगा, हुए होंगे। पूर्णहेतुहेतुमद्—हुआ होता, हुए होते। अपूर्णहेतुहेतु-मद्भूत—होता, होते। सामान्यवर्तमान—होता है, है होते हैं, हैं। सन्दिग्धवर्तमान—होता होगा, होते होंगे। सामान्यभविष्यत्—होगा, होंगे। सम्भाव्यभविष्यत्—होवे होवें। प्रवर्तना—हो (म० पु०)। आदरविधि—होइये।

अव्यय

जिन शब्दोंके रूप सदा एकसे बने रहते हैं अर्थात् लिङ्ग, वचन, और कारक प्रभृतिके कारण जिनमें कोई विकार नहीं होता, उन्हें 'अव्यय' कहते हैं। अव्ययके पाँच भेद मुख्य हैं—

(१) क्रियाविशेषण, (२) सम्बन्धबोधक, (३) समुच्चयबोधक, (४) विस्मयादिबोधक और (५) उपसर्ग (प्रादि)।

(१) क्रियाविशेषण—जिन शब्दोंसे क्रियाकी विशेषता प्रकट होती है, उन्हें क्रियाविशेषण कहते हैं। जैसे—'धीरे बोलो' यहाँ 'धीरे' शब्द 'बोलो' क्रियाकी विशेषता प्रकट कर रहा है, अतः वह क्रियाविशेषण अव्यय है।

(२) सम्बन्धबोधक—जो शब्द वाक्यमें एक शब्दका दूसरे शब्दसे किसी प्रकारका भी सम्बन्ध प्रकट करें उन्हें सम्बन्धबोधक कहते हैं। जैसे—'उनके साथ जावो', 'वृक्षके सामने देखो' इत्यादि। यहाँ 'साथ' और 'सामने' शब्द 'जावो' और 'देखो' क्रियाका 'उनके' और 'वृक्षके' साथ सम्बन्ध बता रहे हैं, अतः वे सम्बन्धबोधक अव्यय हैं।

(३) समुच्चयबोधक—जो शब्द, पदों और वाक्योंको जोड़ते हैं, उन्हें समुच्चयबोधक अव्यय कहते हैं। जैसे—'राम और श्याम गये' यहाँ 'और' शब्द राम, श्याम दोनोंको जोड़ता है, अतः वह अव्यय है।

(४) विस्मयादिबोधक—जो शब्द विस्मय, आश्चर्य्य, कौतूहल प्रभृति भावोंको व्यक्त करते हैं, वेही विस्मयादिबोधक अव्यय हैं।

जैसे—अहो ! आप कहाँ चले गये थे ? अरे ! अब वह संसारमें नहीं है। इत्यादि।

(५) उपसर्ग—जो रूप शब्दोंके (धातुओंके) आदिमें जुटकर उनके अर्थोंको विकसित कर देते हैं, वे उपसर्ग कहे जाते हैं। उनके मुख्य २० भेद हैं—प्र, परा, अप, सम, अनु, अव, निर् (निस्), दुर् (दुस्), अभि, वि, अधि, सु, उत्, अति, नि, प्रति, परि, अपि, उप, आङ्। संस्कृतका एक पद्य है—

"प्रपरापसमन्ववनिर्दुरभिव्यधिसूदतिनिप्रतिपर्य्यपयः।
उप आङिति विंशतिरेप सखे ! उपसर्गगणः कथितः कविना॥"

शब्दरचना।

शब्दोंकी रचना तीन प्रकारसे होती है (१) कई शब्दोंके मेल (समास) से (२) शब्दके (धातुके) आदिमें (पहले) कुछ रूप लगानेसे, और (३) शब्दके पीछे कुछ रूप लगानेसे। उनमें शब्द (धातु) के आदिमें जो लगता है, उसे उपसर्ग कहते हैं। जिसकी चर्चा अभी हो चुकी है। जो रूप शब्दोंके अन्तमें जुटकर उनके रूपोंको बदलते हैं उन्हें प्रत्यय कहते हैं। वे तीन प्रकारके होते हैं—(१) विभक्तिप्रत्यय, (२) कृत्प्रत्यय और (३) तद्धितप्रत्यय, १-विभक्ति।प्रत्यय, शब्द और धातुओंके रूपोंमें बतादिया गया है, २-कृत् ३-और तद्धित प्रत्यय आगे आवेंगे।

समास।

समास,—जब दो या उनसे भी अधिक शब्द अपनी २ विभक्तियोंको छोड़कर आपसमें मिल जाते हैं तो उसे समास कहते हैं। समाससे जो शब्दरचना होती है, उससे समस्त शब्द बनते हैं। जैसे—राजाका पुरुष=राजपुरुष। महान् जो पुरुष =महापुरुष।

इसके मुख्य छः भेद होते हैं:—(१) अव्ययीभाव, (२) तत्पुरुष, (३) कर्मधारय, (४) द्विगु, (५) द्वन्द्व (६) और बहुब्रीहि।

अव्ययीभाव—इसमें पहला शब्द अव्यय होगा, उसीका अर्थ मुख्य रहेगा। इस समासके शब्द संस्कृतमें नपुंसकलिङ्ग हो जाते हैं। जैसे,—शक्तिके अनुसार=यथाशक्ति।

तत्पुरुष—इसमें पहले पदमें कर्ता कारकको छोड़कर सब कारक रहते हैं और दूसरे शब्दमें प्रथम ही कारक रहता है और वही प्रधान रहता है। जैसे,—गाँवको जाने वाला= ग्रामगामी, रामसे बनाया=रामकृत।

कर्म्मधारय—यह विशेष्य-विशेषण और उपमेय-उपमानके साथ होता है—काला कमल=नीलकमल।

द्विगु—इसमें पहला शब्द संख्यावाचक होता है और

१-संस्कृतमें एक सातवाँ भेद "नञ्" समास भी है। "न" और दूसरे शब्दोंके साथ समासको नञ् समास कहते हैं। जैसे—ब्राह्मण नहीं=अब्राह्मण।

आदि सकर्मक धातुओंमें, उन सामान्यादि भूतोंके रहने पर भी, कर्ताका "ने" चिन्ह नहीं आता है। इस दशामें क्रिया कर्ताके अनुसार होती है। जैसे—राम देखता था, राम देखता होता तो, मैं जाता। राम आया,—आया है,—होगा—था,—होता। वह बोला,—है,—होगा,—था,—होता। घोड़ी बछेड़ा जनी,—है,—होगी,—थी,—होती इत्यादि।

३—यदि संयुक्त क्रियाओंमें भी, अन्तमें, कोई अकर्मक क्रिया हो वा पाना, करना आदि सकर्मक क्रियाएँ हों, पौनःपुन्य अर्थ जताने वाले संयुक्त धातु हों और यदि पुकार धातुमें कर्म न हो तो, कर्तामें "ने" नहीं लगता। जैसे,—वह उसे देख आया,—है,—होगा,—था,—होता। वह मेरे दस रुपये खा बैठा,—है,—होगा,—था,—होता। इसी तरह ले भागा इत्यादि। वह पुस्तक पढ़ पाया,—है,—होगा—था,—होता। वह रात भर बैठे २ पढ़ा किया। वह सारी बातें सुना किया ? आप वहाँ क्या, किया किये। कोतवाल साहब पुकारे। (कर्म रहने पर कोतवालने सिपाहीको पुकारा)।

४—संयुक्त क्रियाओंके अन्तमें सकर्मक क्रिया रहने पर भी "ने" का प्रयोग नहीं होता है; यदि वह संयुक्त क्रिया अकर्मक रहे। जैसे,—जब मानसिंह चढ़ आये तो, पठानोंकी सेना चल दी। जब सम्राट् आये तो, सब सरदार तैयार हो लिये थे। जब वह चलने लगे तो, हम भी साथ हो लिये। इत्यादि। किसी २ के सिद्धान्तमें 'हसने हँस दिया' आदि प्रयोग भी शुद्ध हैं।

५—समझना, सोचनामें विकल्पसे "ने" लगता है। जैसे,—वह यह बात सोचा, समझा। उसने यह बात सोची, समझी।

सा० भा० सं० पू० भूतमें क्रिया सकर्मक मांहि।
कर्तृवाच्यमें सर्वदा 'ने' हो, अन्यत नाँहि॥

क्रियाओंके रूप बनानेके नियम।

सामान्यभूत—यदि धातुके अन्तमें 'अ' हो तो 'आ' कर देनेसे। जैसे—पढ़—पढ़ा, चल—चला, लिख—लिखा, इत्यादि। यदि 'आ' या 'ओ' हो तो उसमें या जोड़नेसे। जैसे—आना—आया, खाना—खाया, रोना—रोया, इत्यादि। यदि 'ई' या 'ए' हो तो उनकी जगह इया जोड़ देनेसे। जैसे—पीना—पिया, देना—दिया, इत्यादि। यदि 'ऊ' हो तो 'ऊ' को 'उ' करके 'आ' जोड़ देनेसे सामान्यभूतकी क्रियाएँ बनती हैं। जैसे—चूना—चुआ, छूना—छुआ, इत्यादि।

आसन्नभूत—सामान्यभूतके उत्तम पुरुषके एक वचनमें 'हूँ', मध्यम पुरुष और अन्य पुरुषके एकवचनमें 'है', सिर्फ मध्यम पुरुषके बहुवचनमें 'हो' और अन्य बहुवचनोंमें हैं, लगा देनेसे आसन्नभूतकी क्रियाएँ बनती हैं। जैसे—मैं आया हूँ, हम आये हैं, तू आया है तुम आये हो, वह आया है, वे आये हैं, इत्यादि।

पूर्णभूत—सामान्यभूतमें 'था, थी, थे, थीं लगा देनेसे पूर्णभूतकी क्रियाएँ बनती हैं। जैसे—राम गया था, सीता गयी थी (या) गयी थीं, वे सब गये थे, स्त्रियाँ गयी थीं, इत्यादि।

सन्दिग्धभूत—सामान्य भूतकालमें 'होगा, होंगे, होगी, होंगी' जोड़ देनेसे सन्दिग्धभूतकी क्रियाएँ बन जाती हैं। जैसे—पढ़ा होगा; पढ़ी होगी, पढ़े होंगे, पढ़ी होंगी।

अपूर्णभूत—धातुके अन्तमें 'ता था, ती थी, ते थे, ती थीं (या) रहा था, रही थी, रहे थे, रही थीं' के जोड़नेसे अपूर्णभूतकी क्रियाएँ बनती हैं। जैसे—पढ़ धातुसे पढ़ता था, पढ़ती थी, पढ़ते थे, पढ़ती थीं, पढ़ रहा था, पढ़ रही थी, पढ़ रहे थे, पढ़ रही थीं, इत्यादि।

हेतुहेतुमद्भूत—धातुके अन्तमें 'ता, ती, ते, तीं' लगा देनेसे हेतुहेतुमद्भूतकी क्रियाएँ बनती हैं जैसे—वह आता, आती, वे आते, आतीं।

सामान्यवर्त्तमान—हेतुहेतुमद्भूतके आगे आसन्नभूतके नियमानुसार 'हूँ, है, हो हैं' लगा देनेसे सामान्यवर्त्तमानकी क्रियाएँ बनती हैं। जैसे—जाता हूँ, जाते हैं, जाता है, वे जाते हैं। (स्त्री) जाती है (कोई-कोई वैयाकरण सामान्यवर्त्तमानको तात्कालिक वर्त्तमान या अपूर्ण वर्त्तमान मानते हैं और धातुके आगे रहा हूँ इत्यादि चिह्न लगाते हैं। जैसे—जारहा हूँ, जारही हूँ, इत्यादि)।

सन्दिग्धवर्त्तमान—हेतुहेतुमद्भूतके आगे 'होगा, होगी, होंगे, होंगी' जोड़ देनेसे सन्दिग्धवर्त्तमानकी क्रियाएँ बनती हैं। जैसे—जाता होगा, जाती होगी, जाते होंगे, जाती होंगी, आदि।

सामान्यभविष्यत्—सम्भाव्यभविष्यत् कालकी क्रियाके आगे 'गा, गे, गी' रूप जोड़नेसे सामान्यभविष्यत् कालकी क्रिया

बनती हैं जैसे—पढ़ूँगा, पढ़ेंगे, पढ़ेगा, पढ़ोगे, पढेगा, पढ़ेंगे। (स्त्री) पढ़ूंगी, इत्यादि।

सम्भाव्यभविष्यत्—अकारान्त धातुके 'अ' के बदले क्रमश 'ऊँ, एँ, ए, ओ, ए, एँ' प्रत्यय कर देनेसे और शेष धातुओंके आगे लगानेसे सम्भाव्यभविष्यत् कालकी क्रियाएँ बनती हैं जैसे—मैं पढ़ूँ, हम पढ़ें, तू पढ़े, तुम पढ़ो, वह पढ़े, वे पढें। (प्रवर्तनार्थक क्रियाएँ भी ऐसी ही बनती हैं। सिर्फ मध्यमपुरुषके एकवचनमें कोई प्रत्यय नहीं लगता। जैसे—मैं बोलूँ, हम बोलें, तू बोल, तुम बोलो, वह बोले, वे बोलें, प्रवर्तनार्थकको विधि भी कहते हैं। 'आप' शब्दके साथ आदरविधि होती है अकारान्त धातुके 'अ' को 'इये' करनेसे और शेष धातुओंके आगे 'इये' लगानेसे आदरविधि बनती है। जैसे—बोलिये, जाइये।) पूर्वकालिक क्रिया बनाते समय धातुके आगे 'कर' या 'के' लगाते हैं। जैसे—पढ़कर, पढ़के, इत्यादि।

क्रियाओंकी रूपावली।

अकर्मक 'उठ' धातु कर्तृवाच्य।

सामान्यभूत

कर्ता पुंल्लिङ्ग			कर्ता स्त्रीलिङ्ग		
(पुरुष)	(एकवचन)	(बहुवचन)	(पुरुष)	(एकवचन)	(बहुवचन)
उ०	मैं उठा	हम उठे	उ०	मैं उठी	हम उठीं
म०	तू उठा	तुम उठे	म०	तू उठी	तुम उठीं
अ०	वह उठा	वे उठे	अ०	वह उठी	वे उठीं

आसन्नभूत

मैं उठा हूँ	हम उठे हैं	मैं उठी हूँ	हम उठी हैं
तू उठा है	तुम उठे हो	तू उठी है	तुम उठी हो
वह उठा है	वे उठे हैं	वह उठी है	वे उठी हैं

पूर्णभूत

मैं उठा था	हम उठे थे	मैं उठी थी	हम उठी थीं
तू उठा था	तुम उठे थे	तू उठी थी	तुम उठी थीं
वह उठा था	वे उठे थे	वह उठी थी	वे उठी थीं

अपूर्णभूत

मैं उठता था	हम उठते थे	मैं उठती थी	हम उठतीं थीं
तू उठता था	तुम उठते थे	तू उठती थी	तुम उठती थीं
वह उठता था	वे उठते थे	वह उठती थी	वे उठती थीं

सन्दिग्धभूत

मैं उठा हूँगा	हम उठे होंगे	मैं उठी हूँगी	वह उठी होंगी
तू उठा होगा	तुम उठे होगे	तू उठी होगी	तुम उठी होंगी
वह उठा होगा	वे उठे होंगे	वह उठी होगी	वे उठी होंगी

पूर्णहेतुहेतुमद्भूत

मैं उठा होता	हम उठे होते	मैं उठी होती	हम उठी होतीं
तू उठा होता	तुम उठे होते	तू उठी होती	तुम उठी होतीं
वह उठा होता	वे उठे होते	वह उठी होती	ये उठी होतीं

अपूर्णहेतुहेतुमद्भूत

मैं उठता, उठता होता। हम उठते, उठते होते	मैं उठती, उठती होती। हम उठतीं, उठतीं होतीं
तू उठता, उठता होता। तुम उठते, उठते होते	तू उठती, उठती होती। तुम उठतीं, उठतीं होतीं
वह उठता, उठता होता। वे उठते, उठते होते	वह उठती, उठती होती। वे उठतीं उठती होतीं

सामान्यवर्त्तमान

मैं उठता हूँ	हम उठते हैं	मैं उठती हूँ	हम उठती हैं
तू उठता है	तुम उठते हो	तू उठती है	तुम उठती हो
वह उठता है	वे उठते हैं	वह उठती है	वे उठती हैं

सन्दिग्धवर्तमान

मैं उठता हूँगा	हम उठते होंगे	मैं उठती हूँगी	हम उठती होंगी
तू उठता होगा	तुम उठते होंगे	तू उठती होगी	तुम उठती होंगी
वह उठता होगा	वे उठते होंगे	वह उठती होगी	वे उठती होंगी

सामान्यभविष्यत्

मैं उठूँगा	हम उठेंगे	मैं उठूँगी	हम उठेंगी
तू उठेगा	तुम उठोगे	तू उठेगी	तुम उठोगी
वह उठेगा	वे उठेंगे	वह उठेगी	वे उठेंगी

सम्भाव्यभविष्यत् (या प्रवर्तना विधि)

स्त्रीलिङ्ग-पुँल्लिङ्ग में कोई अन्तर नहीं।

मैं उठूँ हम उठें। तू उठे तू उठ (विधि)। तुम उठो आप उठिये।

(आदर विधि) वह उठे वे उठें पूर्वकालिक—उठकर।

अकर्मक 'उठ' धातु भाववाच्य

(दोनों लिङ्गोंमें एकसे रूप होते हैं)

सामान्यभूत—मुझसे, हमसे, तुझसे, तुमसे, उससे, उनसे उठा गया। आसन्नभूत—उठा गया है। पूर्णभूत—उठा गया था। अपूर्णभूत—उठा जाता था। सन्दिग्धभूत—उठा गया होगा। पूर्णहेतुहेतुमद्भूत—उठा गया होता। अपूर्णहेतुहेतुमद्भूत—उठा जाता या उठा जाता होता। सामान्यवर्तमान—उठा जाता है। सन्दिग्धवर्तमान—उठा जाता होगा। सामान्यभविष्यत्—उठा जायगा। सम्भाव्यभविष्यत्—या (विधि) उठा जाय।

सकर्मक 'लिख' धातु कर्तृवाच्य

सामान्यभूत (कर्म पुल्लिङ्ग स्त्रीलिङ्ग दोनो हैं)

मैंने हमने तूने तुमने उसने उन्होंने सब 'ने' लगने वाले भूतोंमें लगेगा। लिखा। लिखे। लिखी। लिखीं।

आसन्नभूत

लिखा है। लिखे हैं। लिखी है। लिखी हैं।

पूर्णभूत

लिखा था। लिखे थे। लिखी थी। लिखी थीं।

सन्दिग्धभूत

लिखा होगा। लिखे होंगे। लिखी होगी। लिखी होंगी।

पूर्णहेतुहेतुमद्भूत

लिखा होता। लिखे होते। लिखी होती। लिखी होतीं।

अपूर्णभूत

(कर्ता पुँल्लिङ्ग)		(कर्ता स्त्रीलिङ्ग)	
मैं लिखता था	हम लिखते थे	मैं लिखती थी	हम लिखती थीं
तू लिखता था	तुम लिखते थे	तू लिखती थी	तुम लिखती थी
वह लिखता था	वे लिखते थे	वह लिखती थी	वे लिखती थीं

अपूर्णहेतुहेतुमद्भूत (कर्ता पुँल्लिङ्ग)।

मैं लिखता, लिखता होता	हम लिखते, लिखते होते
तू लिखता, लिखता होता	तुम लिखते, लिखते होते
वह लिखता, लिखता होता	वे लिखते, लिखते होते

(कर्ता स्त्रीलिङ्ग)।

मैं लिखती, लिखती होती	हम लिखतीं, लिखती होतीं
तू लिखती, लिखती होती	तुम लिखतीं लिखती होतीं
वह लिखती, लिखती होती	वे लिखतीं, लिखती होतीं

सामान्यवर्तमान।

कर्ता पुल्लिङ्ग		कर्ता स्त्रीलिङ्ग	
मैं लिखता हूँ	हम लिखते हैं	मैं लिखती हूँ	हम लिखती हैं
तू लिखता है	तुम लिखते हो	तू लिखती है	तुम लिखती हो
वह लिखता है	वे लिखते हैं	वह लिखती है	वे लिखती हैं

सन्दिग्धवर्त्तमान

(कर्त्ता पुल्लिङ्ग)		(कर्त्ता स्त्रीलिङ्ग)	
मैं लिखता हूँगा	हम लिखते होंगे	मैं लिखती हूँगी	हम लिखती होंगी
तू लिखता होगा	तुम लिखते होगे	तू लिखती होगी	तुम लिखती होगी
वह लिखता होगा	वे लिखते होंगे	वह लिखती होगी	वे लिखती होंगी

सामान्यभविष्यत्

(कर्त्ता पुँलिङ्ग)		(कर्त्ता स्त्रीलिङ्ग)	
मैं लिखूँगा	हम लिखेंगे	मैं लिखूँगी	हम लिखेंगी
तू लिखेगा	*तुम लिखोगे*	*तू लिखेगी*	*तुम लिखोगी*
वह लिखेगा	वे लिखेंगे	वह लिखेगी	वे लिखेंगी

सम्भाव्यभविष्यत् (प्रवर्तना, विधि)

दोनों लिङ्गोंमें

मैं लिखूँ, हम लिखें. तू लिखे (तू लिख, विधि) तुम लिखो; वह लिखे, वे लिखें। आदर विधि—लिखिये। पूर्वकालिक—लिखकर, के।

सकर्मक 'लिख' धातु कर्मवाच्य

सामान्यभूत

(मुझसे, हमसे, तुझसे, तुमसे, उससे, उनसे, सबके साथ समझना चाहिये।)

कर्म पुँल्लिङ्ग		कर्म स्त्रीलिङ्ग	
मैं लिखा गया	हम लिखे गये	मैं लिखी गयी	हम लिखी गयीं
तू लिखा गया	तुम लिखे गये	तू लिखी गयी	तुम लिखी गयीं
वह लिखा गया	वे लिखे गये	वह लिखी गयी	वे लिखी गयीं

आसन्नभूत

मैं लिखा गया हूँ	हम लिखे गये हैं	मैं लिखी गयी हूँ	हम लिखी गयीं हैं
तू लिखा गया है	तुम लिखे गये हो	तू लिखी गयी है	तुम लिखी गयी हो
वह लिखा गया है	वे लिखे गये हैं	वह लिखी गयी है	वे लिखी गयी हैं

पूर्णभूत (कर्म पुंल्लिङ्ग)

मैं लिखा गया था　　हम लिखे गये थे
तू लिखा गया था　　तुम लिखे गये थे
वह लिखा गया था　　वे लिखे गये थे

(कर्म स्त्रीलिङ्ग)

मैं लिखी गयी थी　　हम लिखी गयी थीं
तू लिखी गयी थी　　तुम लिखी गयी थीं
वह लिखी गयी थी　　वे लिखी गयी थीं

अपूर्णभूत (कर्म पुंल्लिङ्ग)

मैं लिखा जाता था　　हम लिखे जाते थे
तू लिखा जाता था　　तुम लिखे जाते थे
वह लिखा जाता था　　वे लिखे जाते थे

(कर्म स्त्रीलिङ्ग)

मैं लिखी जाती थी　　हम लिखी जाती थीं
तू लिखी जाती थी　　तुम लिखी जाती थीं
वह लिखी जाती थी　　वे लिखी जाती थीं

सन्दिग्धभूत (कर्म पुंल्लिङ्ग)

मैं लिखा गया हूँगा　　हम लिखे गये होंगे

तू लिखा गया होगा	तुम लिखे गये होगे
वह लिखा गया होगा	वे लिखे गये होंगे

(कर्म स्त्रीलिङ्ग)

मैं लिखी गयी हूँगी	हम लिखी गयी होंगी
तू लिखी गयी होगी	तुम लिखी गयी होंगी
वह लिखी गयी होगी	वे लिखी गयी होंगी

पूर्णहेतुहेतुमद् (कर्म पुंल्लिङ्ग)

मैं लिखा गया होता	हम लिखे गये होते
तू लिखा गया होता	तुम लिखे गये होते
वह लिखा गया होता	वे लिखे गये होते

(कर्म स्त्रीलिङ्ग)

मैं लिखी गयी होती	हम लिखी गयी होतीं
तू लिखी गयी होती	तुम लिखी गयी होतीं
वह लिखी गयी होती	वे लिखी गयी होतीं

अपूर्णहेतुहेतुमद्भूत (कर्म पुंल्लिङ्ग)

मैं लिखा जाता	हम लिखे जाते
तू लिखा जाता	तुम लिखे जाते
वह लिखा जाता	वे लिखे जाते

(कर्म स्त्रीलिङ्ग)

मैं लिखी जाती	हम लिखी जातीं
तू लिखी जाती	तुम लिखी जातीं
वह लिखी जाती	वे लिखी जातीं

सामान्यवर्तमान (कर्म पुँल्लिङ्ग)

मैं लिखा जाता हूँ	हम लिखे जाते हैं
तू लिखा जाता है	तुम लिखे जाते हो
वह लिखा जाता है	वे लिखे जाते हैं

(कर्म स्त्रीलिङ्ग)

मैं लिखी जाती हूँ	हम लिखी जाती हैं
तू लिखी जाती है	तुम लिखी जाती हो
वह लिखी जाती है	वे लिखी जाती हैं

सन्दिग्धवर्तमान (कर्म पुँल्लिङ्ग)

मैं लिखा जाता हूँगा	हम लिखे जाते होंगे
तू लिखा जाता होगा	तुम लिखे जाते होंगे
वह लिखा जाता होगा	वे लिखे जाते होंगे

(कर्म स्त्रीलिङ्ग)

मैं लिखी जाती हूँगी	हम लिखी जाती होंगी
तू लिखी जाती होगी	तुम लिखी जाती होंगी
वह लिखी जाती होगी	वे लिखी जाती होंगी

सामान्यभविष्यत् (कर्म पुँल्लिङ्ग)

मैं लिखा जाऊँगा	हम लिखे जाएँगे
तू लिखा जायगा	तुम लिखे जाओगे
वह लिखा जायगा	वे लिखे जायँगे

(कर्म स्त्रीलिङ्ग)

मैं लिखी जाऊँगी	हम लिखी जाएँगी

सम्भाव्यभविष्यत् (कर्मपुँल्लिङ्ग)

मैं लिखा जाऊँ	हम लिखे जायें
तू लिखा जाय, तू लिखा जा (विधि)	तुम लिखे जाओ
वह लिखा जाय	वे लिखे जायें

(कर्म स्त्रीलिङ्ग)

मैं लिखी जाऊँ	हम लिखी जायें
तू लिखी जाय, तू लिखी जा(विधि)	तुम लिखी जाओ
वह लिखी जाय	वे लिखी जायें

आदरविधि—आप लिखे जाइये, आप लिखी जाइये।

(इसी प्रकार अन्य क्रियाओंके रूप होते हैं।)

'हो' धातु

'हो' धातुके दो अर्थ होते हैं—उत्पत्ति और विद्यमानता। जैसे—होता है, (अर्थात् उत्पन्न होता है;) है, (अर्थात् विद्यमान है)। इनके रूपोंमें केवल पूर्णभूत और सामान्यवर्तमान कालमें भेद होता है। जैसे—सामान्य—हुआ, हुए। आसन्न—हुआ है, हुए हैं। पूर्ण—हुआ था, था हुए थे, थे। अपूर्णभूत - होता था, होते थे। सन्दिग्ध—हुआ होगा, हुए होंगे। पूर्णहेतुहेतुमद्—हुआ होता, हुए होते। अपूर्णहेतुहेतु-मद्भूत—होता, होते। सामान्यवर्तमान—होता है, है होते हैं, हैं। सन्दिग्धवर्तमान—होता होगा, होते होंगे। सामान्यभविष्यत्—होगा, होंगे। सम्भाव्यभविष्यत्—होवे होवें। प्रवर्तना—हो (म० पु०)। आदरविधि—होइये।

अव्यय

जिन शब्दोंके रूप सदा एकसे बने रहते हैं अर्थात् लिङ्ग, वचन, और कारक प्रभृतिके कारण जिनमें कोई विकार नहीं होता, उन्हें 'अव्यय' कहते हैं। अव्ययके पाँच भेद मुख्य हैं—

(१) क्रियाविशेषण, (२) सम्बन्धबोधक, (३) समुच्चयबोधक, (४) विस्मयादिबोधक और (५) उपसर्ग (प्रादि)।

(१) क्रियाविशेषण—जिन शब्दोंसे क्रियाकी विशेषता प्रकट होती है, उन्हें क्रियाविशेषण कहते हैं। जैसे—'धीरे बोलो' यहां 'धीरे' शब्द 'बोलो' क्रियाकी विशेषता प्रकट कर रहा है, अतः वह क्रियाविशेषण अव्यय है।

(२) सम्बन्धबोधक—जो शब्द वाक्यमें एक शब्दका दूसरे शब्दसे किसी प्रकारका भी सम्बन्ध प्रकट करें उन्हें सम्बन्धबोधक कहते हैं। जैसे—'उनके साथ जावो', 'वृक्षके सामने देखो' इत्यादि। यहाँ 'साथ' और 'सामने' शब्द 'जावो' और 'देखो' क्रियाका 'उनके' और 'वृक्षके' साथ सम्बन्ध बता रहे हैं, अतः वे सम्बन्धबोधक अव्यय हैं।

(३) समुच्चयबोधक—जो शब्द, पदों और वाक्योंको जोड़ते हैं, उन्हें समुच्चयबोधक अव्यय कहते हैं। जैसे—'राम और श्याम गये' यहाँ 'और' शब्द राम, श्याम दोनोंको जोड़ता है, अतः यह अव्यय है।

(४) विस्मयादिबोधक—जो शब्द विस्मय, आश्चर्य्य, कौतूहल प्रभृति भावोंको व्यक्त करते हैं, वेही विस्मयादिबोधक अव्यय हैं।

जैसे—अहो ! आप कहाँ चले गये थे ? अरे ! अब वह संसारमें नहीं है। इत्यादि।

(५) उपसर्ग—जो रूप शब्दोंके (धातुओंके) आदिमें जुटकर उनके अर्थोंको विकसित कर देते हैं, वे उपसर्ग कहे जाते हैं। उनके मुख्य २० भेद हैं—प्र, परा, अप, सम, अनु, अव, निर् (निस्), दुर् (दुस्), अभि, वि, अधि, सु, उत्, अति, नि, प्रति, परि, अपि, उप, आङ्। संस्कृतका एक पद्य है—

"प्रपरापसमन्ववनिर्दुरभिव्यधिसूदतिनिप्रतिपर्य्यपयः।
उप आङिति विंशतिरेप सखे! उपसर्गगणः कथितः कविना॥"

शब्दरचना।

शब्दोंकी रचना तीन प्रकारसे होती है (१) कई शब्दोंके मेल (समास) से (२) शब्दके (धातुके) आदिमें (पहले) कुछ रूप लगानेसे, और (३) शब्दके पीछे कुछ रूप लगानेसे। उनमें शब्द (धातु) के आदिमें जो लगता है, उसे उपसर्ग कहते हैं। जिसकी चर्चा अभी हो चुकी है। जो रूप शब्दोंके अन्तमें जुटकर उनके रूपोंको बदलते हैं उन्हें प्रत्यय कहते हैं। वे तीन प्रकारके होते हैं—(१) विभक्तिप्रत्यय, (२) कृत्प्रत्यय और (३) तद्धितप्रत्यय, १-विभक्ति।प्रत्यय, शब्द और धातुओंके रूपोंमें बतादिया गया है, २-कृत् ३-और तद्धित प्रत्यय आगे आवेंगे।

समास।

समास,—जब दो या उनसे भी अधिक शब्द अपनी २ विभक्तियोंको छोड़कर आपसमें मिल जाते हैं तो उसे समास कहते हैं। समाससे जो शब्दरचना होती है, उससे समस्त शब्द बनते हैं। जैसे—राजाका पुरुष=राजपुरुष। महान् जो पुरुष =महापुरुष।

इसके मुख्य छः भेद होते हैं:—(१) अव्ययीभाव, (२) तत्पुरुष, (३) कर्मधारय, (४) द्विगु, (५) द्वन्द्व (६) और बहुव्रीहि।[1]

अव्ययीभाव—इसमें पहला शब्द अव्यय होगा, उसीका अर्थ मुख्य रहेगा। इस समासके शब्द संस्कृतमें नपुंसकलिङ्ग हो जाते हैं। जैसे,—शक्तिके अनुसार=यथाशक्ति।

तत्पुरुष—इसमें पहले पदमें कर्ता कारकको छोड़कर सब कारक रहते हैं और दूसरे शब्दमें प्रथम ही कारक रहता है और वही प्रधान रहता है। जैसे,—गाँवको जाने वाला= ग्रामगामी, रामसे बनाया=रामकृत।

कर्म्मधारय—यह विशेष्य-विशेषण और उपमेय-उपमानके साथ होता है—काला कमल=नीलकमल।

द्विगु—इसमें पहला शब्द संख्यावाचक होता है और

१-संस्कृतमें एक सातवाँ भेद "नञ्" समास भी है। "न" और दूसरे शब्दोंके साथ समासको नञ् समास कहते हैं। जैसे— ब्राह्मण नहीं = अब्राह्मण।

समस्त शब्दोंसे समुदायका ज्ञान होता है। जैसे—नवरत्न= नवरत्नोंका समुदाय। पञ्चपात्र, त्रिलोकी इत्यादि।

द्वन्द्व,—जिसमें 'और' शब्द लोप हो और सभी शब्द प्रधान हों। जैसे,—अन्न-जल, राम-कृष्ण इत्यादि।

बहुब्रीहि,—जिसमे ? जिन शब्दोंके साथ समास होता है, उनमें किसीका अर्थ प्रधान नहीं होता; किन्तु दोनोको मिलाकर एक दूसरा ही अर्थ होता है। जैसे,—चन्द्रशेखर=न चन्द्र न शेखर, किन्तु एक दूसरा ही "शिव" अर्थ है। यहाँ चन्द्रमा है शिर पर जिसके, ऐसा [1]विग्रह समझना चाहिये। यों ही पीताम्बर, वज्रायुध इत्यादि।

कृदन्त।

धातुसे प्रत्यय करने पर सामान्यतः पाँच प्रकारके, कृदन्तके, शब्द बनते हैं:—(१) कर्तृवाचक, (२) भाववाचक, (३) करण-वाचक, (४) विशेषणवाचक और (५) अव्ययवाचक।

(१) कर्तृवाचक,—क्रिया और धातुसे वाला, हार, वाहा, अक, आक, आ, इया, ऐया, वैया, एरा और आरी या आड़ी प्रत्यय लगाने पर कर्तृवाचक संज्ञा होती है। जैसे,—पानेवाला, सिर्जनहार, चरवाहा, विचारक, तैराक, भूँजा, खोजिया, परखैया, रिझवैया, लुटेरा, पुजारी, खिलाड़ी। आदि।

(२) भाववाचक,—(क) धातुसे अक, अन, आन, आप,

(१) समस्त पदोंको अलग २ करनेका नाम विग्रह है।

हिन्दीमें अगणित तद्धितप्रत्यय हैं। वस्तुतः हिन्दीकी जान तद्धितप्रत्यय ही हैं।

तद्धितान्त शब्द ९ प्रकारके होते हैं: (१)—कर्तृवाचक, (२) गुणवाचक, (३) भाववाचक, (४) अल्पार्थक, (५) अव्ययवाचक, (६) पूरणार्थक, (७) सादृश्यार्थक, (८) आदरार्थक, (९) निश्चयार्थक।

(१) कर्तृवाचक—ई,—विदेशी, बिहारी। इया,—अढ़तिया, डाकिया। वाला,—दहीवाला, चूड़ीवाला। गार,—खिदमतगार, यादगार। ची,—खजानची, तबलची। आर,—सितार, किनार। एरा,—सँपेरा, लुटेरा। री,—मदारी, पुजारी। वार,—पतवार, तलवार।

(२) गुणवाचक—वा,—कुड़वा, पुरवा। ऊ,—खड़ाऊ टिकाऊ, ऐला,—खपड़ैला, सुरैला। नाक,—खतरनाक, खौफनाक। मन्द,—अकलमन्द, दौलतमन्द। वर,—जोरावर, दिलावर। वार,—पैदावार, उम्मीदवार। मान्,—श्रीमान्, मतिमान्। वान्,—धनवान्, ज्ञानवान्। वी (विन्),—यशस्वी, मेधावी। ई,—धनी, गुणी। इत,—दुःखित, दीक्षित। तर, तम,—गुरुतर, लघुतर, प्रियतम, लघुतम। इष्ठ,—ज्येष्ठ, कनिष्ठ। ईय,—भारतीय, राजकीय। इक,—धार्मिक, राजनीतिक।

(३) भाववाचक—पन,—अल्हड़पन, बचपन। पा,—बुढ़ापा, मैयापा। आरा,—निपटारा, बटवारा। आस,—मिठास, [illegible]। गी,—जिन्दगी, [illegible]। य,—धैर्य, शौर्य। ता,—पटुता, गुरुता। इमा (इमन्)—महिमा, गरिमा। त्व,—प्रभुत्व, महत्त्व,

(४) अल्पार्थक—वा, इया,—बछवा, लोटिया,। री,—कोठरी, टटरी। 'आ' को 'ई' करनेसे,—रस्सी, गली।

(५) अव्ययवाचक—तना,—जितना.। तक,—दूरतक। ओं,—कोसों। व,—अब। भर,—दिनभर। था,—तथा। त्र—सर्वत्र। दा,—सर्वदा। शः,—बहुशः,। धा,—बहुधा।

(६) पूरणार्थक—वाँ,-पाँचवाँ, आदि। (७) सादृश्यार्थक—सा,—कैसा आदि। (८) आदरार्थक—जी,—गुरुजी।

(९) निश्चयार्थक—ही,-यही आदि।

वाक्य-विभाग।

वाक्यके दो खण्ड होते हैं—उद्देश्य और विधेय। जिसके सम्बन्धमें कुछ कहा जाय, उसे उद्देश्य कहते हैं। उद्देश्यके विषयमें जो कुछ कहा जाय, उसे विधेय कहते हैं। जैसे—बालक खेलता है, इस वाक्यमें 'बालक' उद्देश्य है और बालकके सम्बन्धमें कहा गया 'खेलता है' विधेय है।

वाक्य तीन प्रकारके होते हैं—साधारण, मिश्रित और महावाक्य।

साधारणवाक्य—जिस वाक्यमें केवल एक उद्देश्य और एक ही विधेय होता है, उसे साधारणवाक्य कहते हैं। यह छोटा बड़ा भी होता है। जैसे—मैं जाता हूँ। काशीमें सम् १९३९ ई० में सभी प्रतिनिधियोंकी उपस्थितिमें एक बहुत बड़ा हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन हुआ।

मिश्रितवाक्य—जिस वाक्यमें एक प्रधानवाक्य और एक या अधिक अङ्गवाक्य होते हैं, उसे मिश्रितवाक्य कहते हैं। जैसे—उसने कहा कि मैं आज पटना जाऊँगा। इस वाक्यमें 'उसने कहा' प्रधानवाक्य और 'मैं आज पटना जाऊँगा' अङ्गवाक्य है।

महावाक्य—जिस वाक्यमें दो या अधिक साधारण या मिश्रित वाक्य होते हैं, उसे महावाक्य कहते हैं। जैसे—एक पैराग्राफमें बहुत महावाक्य होते हैं।

वाक्य रचनाके कुछ नियम।

(१) यदि वाक्यमें एक क्रियाके अनेक कर्त्ता हों तो क्रिया एकही बार लायी जायगी। जैसे—न मैंने देखा, न तुमने।

(२) यदि एकही कर्त्ताकी अनेक क्रियाएँ हों तो कर्त्ता केवल एकही बार लाया जाता है। जैसे—राम न तो पढ़ता है, न लिखता है।

(३) एक वाक्यमें भिन्न लिङ्गके अनेक कर्त्ता बहुवचनमें हों अथवा मिश्रित हों तो क्रियाके लिङ्ग, वचन, पुरुष अन्तिम कर्ताके अनुसार होते हैं। जैसे :—एक बालक, पाँच पुरुष और सात बालिकाएँ रामायण पढ़ रही हैं। यदि विभिन्न लिङ्गके अनेक कर्त्ता एकवचनमें हों तो क्रिया पुँल्लिङ्ग और बहुवचनमें आती है। जैसे—जुलाहा, बनिया, तेलिन, सँपेरा, घसियारा और धोबिन गाँवको जा रहे हैं।

(४) समुच्चयबोधक (संयोजक) अव्ययसे जुड़े रहने पर भी यदि एक ही लिङ्गके अप्राणिवाचक शब्द हों तो क्रिया प्रायः उसी

लिङ्गके एकवचनमें रहती है। जैसे—हरिशङ्करकी सफलता सुनकर मुझे आश्चर्य और हर्ष हुआ। उस समुदायके पास केवल एक धोती और दरी थी। गायका रूप और रङ्ग अच्छा है।

(५) यदि वाक्यमें अनेक असमान लिङ्गोंके एकवचन प्राणिवाचक कर्ता हों तो क्रिया प्रायः पुंल्लिङ्ग बहुवचनमें आती है। जैसे—राम, लक्ष्मण और सीता वन जाते थे। उनके पिता और माता पुण्यात्मा थे।

(६) तीनों पुरुषोंके मेलमें, उत्तमपुरुष और मध्यमपुरुषके मेलमें तथा उत्तमपुरुष और अन्यपुरुषके मेलमें क्रिया उत्तमपुरुषमें आती है। जैसे—हम, तुम और वह जाते हैं। हम और तुम चलेंगे। हम और वह बैठेंगे। मध्यमपुरुष और अन्यपुरुषके मेलमें मध्यमपुरुषमें आती है। जैसे—वह और तुम जाओगे।

(७) यदि वाक्यमें बहुतसे कर्ता हों और उनके बीच कोई अलग करने वाला शब्द आ जाय तो क्रियाके लिङ्ग, वचन अन्तिम कर्ताके अनुसार होंगे। जैसे—मेरी गाय या घोड़ा आता है। रामका भाई या बहिन वहाँ जायगी।

(८) आदर प्रगट करनेमें विभक्ति रहित कर्त्ताके साथ बहुवचन क्रिया आती है। जैसे गुरुजी आ गये, भाईजी विद्वान् हैं।

(९) यदि एक ही लिङ्गके एकवचनमें ही कई कर्त्ता हों तो क्रिया उसी लिंगके बहुवचनमें होगी। जैसेः—हरिशङ्कर और महेन्द्र पढ़ेंगे, केशवी और यशोदा आवेंगी।

(१०) यदि "हर एक" या "प्रत्येक" शब्दके साथ संज्ञा हो

तो, क्रिया एकवचनान्त ही होती है। जैसे—प्रत्येक घोड़ा मारा गया।

(११) यदि अनेक उद्देश्योंके (कर्त्ताओंके) का विधेय (क्रिया या क्रिया-समन्वित शब्द) एक हो तो, विधेयमें अन्तिम उद्देश्यका लिंग होता है। जैसे,—उसके कपड़े और पुस्तकें बड़ी अच्छी हैं। पर यदि विधेय संज्ञा हो तो, उसीके अनुसार क्रिया होगी। जैसे,—सोना, चाँदी आदि धातु कहलाता है।

(१२) नीचे लिखे शब्दोंका प्रयोग सदा बहुवचनमें होते हैं—प्राण, आँसू, दर्शन, अक्षत, ओठ, बूँद इत्यादि। जैसे,—प्राण पखेरू उड़ गये, आपके रामके दर्शन हुए, अक्षत वेदीपर छोड़े गये, ओठ फड़कने लगे, बूँदें पड़ रही हैं, इत्यादि।

विरामचिह्न।

वाक्यके भावको भली प्रकारसे विदित करनेके लिये बोलीके ठहराव आदिके अनुसार वाक्यमें जो चिह्न लगाये जाते हैं उन्हें विरामचिह्न कहते हैं। बोलनेमें कहीं थोड़ा ठहरते हैं कहीं अधिक। कहीं प्रश्न होता है, कहीं आश्चर्य आदि हृदयके भाव प्रगट करने होते हैं। विरामचिह्न दस प्रकारके हैं, इनके अर्थके अनुसार ही इनका प्रयोग भी होता है—

(१) अल्पविराम (,), (२) अर्धविराम (;), (३) पूर्ण-विराम (।), (४) प्रश्नचिह्न (?), (५) आश्चर्यबोधक (!),

(६) अवतरणचिह्न (" "), (७) कोष्ठक ( ) [ ], (८) योजक (-), (९) निर्देशक (—), (१०) लाघवचिह्न (०)। अङ्कोंके प्रयोगमें आनेवाले चिह्न—(११) गुणनचिह्न (×), (१२) भागचिह्न (÷), (१३) योगचिह्न (+), (१४) घटावचिह्न (—)।

पत्र-लेखन।

१—पत्र लिखते समय शिष्टाचारका ही प्राधान्य रहता है। शिष्टाचार-सूचक शब्दोंको "प्रशस्ति" कहते हैं। इस प्रशस्तिमें पुरानी प्रथाके अनुसार बड़ोंको "सिद्धि श्री" और छोटोंको "स्वस्ति श्री" लिखनेके बाद विद्यावृद्धको "पूज्यपाद", "प्रातःस्मरणीय" आदि, वयोवृद्धको "श्रद्धास्पद", "मान्यवर" आदि, धर्मवृद्धको "धर्मधुरीण", "धर्माचार्य्य" आदि, मित्रको "प्रियवर", "मित्रवर्य्य", आदि, छोटेको "चिरञ्जीव", "प्रियवत्स", आदि, स्त्रीको "प्रिये", "प्राणवल्लभे" आदि, पतिको "आर्य्यपुत्र", "प्राणनाथ" आदि लिखकर बड़ोंको "प्रणाम", छोटोंको "आशीर्वाद" और बराबरको "नमस्कार" आदि लिखा जाता है। फिर पत्र प्रारम्भ किया जाता है।

२—नामके पहले "श्री" शब्द अवश्य लिखना चाहिये। उसका नियम यह है,—

"श्री लिखिये षट् गुरुन को; पाँच स्वामि, रिपु चारि।
तीन मित्र, दो भृत्य को; एक शिष्य, सुत, नारि॥"

३—प्रशस्ति विधिके अनुसार लिखने वालेका नाम तथा स्थान प्रशस्तिमे ही आ जाना चाहिये। अन्तमें "इति", "इतिशम्", "किमधिकम्", "इत्यलम्", "इति शुभम्", "ॐ शान्तिः", "कृपा बनाये रखियेगा" इत्यादि लिखकर पत्र समाप्त किया जाता है। बाद मिति, संवत् आदि लिखा जाता है।

(आचार्यके पास)

सिद्धि श्री पूज्यपाद श्री ६ आचार्य्यजी महाराजको लिखी काशीजीसे श्रीगोवर्द्धनप्रसादका चरण छूकर प्रणाम पहुँचे। आगे यहाँ सब प्रकार कुशल है। × × आज्ञानुसार मैं अवश्य आऊँगा। कृपा बनी रहे। इति।

मिति श्रावण सुदी १३, बुध, सं० १९९६।

(शिष्यके पास)

स्वस्ति श्री चिरञ्जीवी श्रीयमुनाप्रसादको लिखी प्रयागजीसे श्रीरामप्रसादका आशीर्वाद पहुँचे। आगे यहाँ कुशल है। × × × × अपना शुभ समाचार भेजना। इतिशम्।

मिति, भाद्रपद सुदी २, मगल, स० १९९६।

इस प्रथासे भिन्न एक और प्रथा है। जैसे—पत्र लिखते समय पत्रकी दाहिनी ओर ऊपर अपना पता और तिथि लिखे। बाद पहली पंक्तिमें शिष्टाचारानुमोदित शब्दोंको लिखकर दूसरी पंक्तिसे पत्र लिखे। अन्तमें छोटा लेखक "आपका आज्ञाकारी",

"कृपाभिलाषी", "आपका", "भवदीय", "चरण-सेवक" आदि। बड़ा लेखक "तुम्हारा हितैषी", "शुभेच्छु" आदि, समलेखक "आपका प्रिय मित्र", "अनुगृहीत" आदि लिखकर नीचे दूसरी लाइनमें दाहिनी ओर श्रीसहित अपना नाम लिखे।

अपने नाममें लोग "श्री" नहीं लगाते, पर यह ठीक नहीं है जीवित मनुष्यके नामके आदिमें श्री अवश्य लिखनी चाहिये। बङ्गालमें तो यह रूढ़ि है कि, यदि नामके आदिमें श्री न रहे तो, उसे लोग जीवित नहीं समझते।

(आचार्यके पास)

पराशरब्रह्मचर्याश्रम, सीताकुण्ड,
नलिया। १२-४-९६

पूज्यपाद श्रीपिताजीके चरणोंमें साष्टांग प्रणाम।

आपको विदित हो कि मैं यहाँ आयुर्वेद पढ़ रहा हूँ। इधर आपका पत्र नहीं आया। अतः चित्त चिन्तित रहता है। × × × यह निश्चय है कि यह सब आपकी ही दया है।

आपका आज्ञाकारी—
श्रीधर्मनाथ।

(शिष्यके पास)

५/५४ लक्ष्मीकुण्ड, काशी।
१५-४-९६.

प्रियवत्स !

मैंने जबसे तुम्हारी खबर सुनी है, तभीसे चित्त चञ्चल हो

रहा है। × × मैं बहुत शीघ्र आऊँगा। × × स्वास्थ्य पर ध्यान रखना। 'हिन्दीधर्मोपदेशिका' बड़ी अच्छी पुस्तक है। उसे अवश्य पढ़ना।

तुम्हारा हितैषी,
श्रीशिवकुमार शास्त्री।

इन दोनों प्रथाओंके सिवा, अंग्रेजी ढंग पर, एक तीसरी प्रथा भी है, जो आजकल खूब प्रचलित है। इसके अनुसार पत्रको बहुत संक्षेपमें लिखते हैं। यह हमारी दूसरी प्रथासे मिलती है।

प्रार्थना पत्र पर ऊपर दाहिनी ओर अपना पता नहीं लिखा जाता। केवल कुछ अधिक हाशिया (Margin) छोड़कर श्रीयुक्त या श्रीमान् प्रधानाध्यापक महोदयवर लिखकर दूसरी लाइनमें कुछ दाहिनी तरफ हटकर पाठशालाका नाम, उसके नीचे कुछ दाहिनी ओर हटकर स्थान लिखे, फिर नीचेकी लाइनमें ज्यादा बाईं ओर हटकर सम्बोधनान्त शब्द लिखे। यह एक दम ऊपर लिखी हुई लाइनसे भी बाईं ओर हो; क्योंकि इसीके अनुकूल सारी लाइनें लिखनी होंगी। यह ठीक हाशियाके आखिरसे शुरू होना चाहिये। फिर नीचेकी लाइनमें पैराग्राफ छोड़कर वाक्य प्रारम्भ करे। अन्तमें शिष्टाचारानुसार दाहिनी तरफ दूसरी लाइनमें अपना नाम और बाईं तरफ वर्गांकुश लिखकर पता और तिथि लिखनी चाहिये।

श्रीयुक्त प्रधानाध्यापक महोदय,
श्रीकाशी-विद्यापीठ,
बनारस ।

श्रीमान् पूज्यपाद आचार्यजी !

आज मैं आवश्यक कार्य-वश पाठशाला नहीं आ सकता। अतः नम्र निवेदन है कि, मेरी आजकी अनुपस्थिति क्षमा करेंगे।

दर्शनविद्यालय,
काशी ।
तिथि १५-४-९६

आपका प्रिय शिष्य—
श्रीराघवेन्द्र त्रिपाठी ।

२—लिफाफे पर पता लिखते समय पहले नाम, नीचे ग्राम, उसके नीचे पोष्ट आफिस, अन्तमें नीचे जिला लिखना चाहिये।

नमूना ।

सेवामें—

श्रीमान् पं० रामनारायण मिश्र बी० ए०,

प्रिन्सिपल डी० ए० वी०, कालेज,

बनारस-सिटी ।

टिकट
की
जगह

३—राष्ट्रीयताकी दृष्टिसे पता हिन्दीमें ही लिखना चाहिये। और तारीखोंकी जगह सौर तिथियोंका प्रयोग होना चाहिये।

४—यदि उसी जिलेमें दूसरी जगह पत्र भेजना हो तो, जिलाका नाम नहीं लिखना चाहिये । यदि किसीके द्वारा दूसरेके पास पत्र भेजना हो तो, नामके नीचे C/o लिखना चाहिये। यह केयर औफ् (Cere-Of) का संक्षिप्त रूप है । इसका अर्थ है द्वारा या मार्फत । इसके बाद मार्फतवालेका नाम लिखना चाहिये ।

श्री मान् पं० क्षेमधर त्रिपाठी जी,
Co पं० शिवकुकार शास्त्री जी,
न० ५/५४ लक्ष्मीकुण्ड काशी ।

सौरतिथि ।

सौरवर्ष चौदहवीं अप्रैलको शुरू होकर तेरहवीं अप्रैलको समाप्त होता है । महीनोंका नाम राशियोंके नाम पर है । जैसे— १ मेष, (वैशाख, अप्रैल), २ वृष, ३ मिथुन, ४ कर्क, ५ सिंह, ६ कन्या, ७ तुला, ८ वृश्चिक, ९ धन, १० मकर, ११ कुम्भ, १२ मीन (चैत्र, मार्च) । तिथि संख्याके लिये भी, अंग्रेजी सा ही नियम है । जैसे—

"बत्तिस मिथुन दिनेश दिन, एकतीस शेष गनु
तीस तुला, घट, मकर, मिन, उनतीस वृश्चिक धनु ।
बिक्रम चौथे वरस, कुम्भ इकतीस गिनैये,
दिये चारसे भाग, शेष जो कछू न पैये ।"

यह मास सूर्य्य-संक्रान्तिसे शुरू होकर दूसरी संक्रान्ति तक

समाप्त होता है और उसीके अनुसार तिथियाँ लिखी जाती हैं। मिथुन (आषाढ़) ३२, दिनोंका होता है। शेष मेष (वैशाख), वृष (ज्येष्ठ), कर्क (श्रावण), सिंह (भादों) और कन्या (कार) की संक्रान्ति ३१ दिनों पर समाप्त होती है, अर्थात् वे मास ३१ दिनोंके होते हैं। तुला (कार्तिक), घट=कुम्भ (फाल्गुन), मकर (माघ)। मीन (चैत्र) की संक्रान्ति ३० दिनोंकी है। वृश्चिक (अगहन) और धनु (पौष) २९ दिनोंके होते हैं। कुम्भमें हर चौथे वर्ष ३० की जगह ३१ दिन होते हैं। इसमें संवत् विक्रमादित्यका लिया जाता है। ऐसे विचारवाले सज्जनोंको ज्ञानमण्डल (काशी) की डायरी और पञ्चाङ्ग रखने चाहिये।

अनुवाद।

किसी भाषाका दूसरी भाषामें अनुवाद करते समय यह ध्यान रहना चाहिये कि, जिस भाषामें अनुवाद करना है, उस भाषाकी पद्धति क्या है ? लेखकका अभिप्राय बदलता तो नहीं है, उसके किसी शब्दका अर्थ तो नहीं छूट रहा है ? बस, इतना ध्यान काफी है। अनुवादकी भाषा पर भी ध्यान रहना चाहिये कि वह शुद्ध और सजीव होती है या नहीं ? आजकल अनुवादक प्रायः अनुवाद्य भाषाकी पद्धति हिन्दीमें भी रख देते हैं, जिससे हिन्दीका स्वरूप ही नष्ट हो जाता है। जैसे—

"Two things are closely joined together, the

'education, the training ano development of women; and the greatness of a nation. When these women were the Indion mothers, heroes and Rishis were born; and now out of child-mothers cowards and social pigmies come forth cause and effect still in your power to change" (दे० द०)

अनुवादका अशुद्ध रूपः—

'दो चीजें बहुत मिलती-जुलती हैं:--आपसमें। (१) शिक्षा, मानसिक तथा शारीरिक उन्नति स्त्रियोंकी और (२) तरक्की किसी जातिकी, जब ये औरतें भारतमाताएँ थीं, वीर और ऋषि पैदा होते थे। इस समय बाल माताओंसे कायर साधारण बौने पैदा होते हैं। कारण और कार्य, इन दोनोंको तबदील करना तुम्हारे हाथमें है।'

इसका शुद्ध रूपः---

(१) 'स्त्रियोंकी शिक्षा, मानसिक, धार्मिक तथा शारीरिक उन्नति और (२) किसी जातिकी बड़ाई,—इन दो बातोंका आपसमें बहुत घनिष्ठ सम्बन्ध है। जब भारतमें ऐसी (योग्य) माताएँ थीं तो, वे योद्धा और ऋषिरत्न (सन्तानें) उत्पन्न करती थीं; पर अब (मूर्खा) बाल-माताओंसे कायर और कलङ्कित (कुपुत्र) पैदा होते हैं। कारण और कार्य्य, इनको सुधारना (कारणको सुधार कर कार्य्यको सिद्ध करना) अब भी तुम्हारे हाथमें है।'

"एवम्वादिनम्भगवन्तमग्निवेश उवाच, "किन्तु खलु भगवन्! नियतकालप्रमाणमायुः सर्वमथेति।" "इह अग्निवेश! भूतानामायुर्युक्तिमपेक्षते।

अशुद्धः—

'इस प्रकार कहने वाले भगवान् आत्रेयसे अग्निवेश बोले:— क्या महाराज! सब आयु नियत काल वाली होती है या नहीं? भगवान् बोले, यहाँ पर अग्निवेश! जीवोंकी आयु युक्तिकी अपेक्षा करती है।'

शुद्ध :—

'जब भगवान् आत्रेय इस तरह कह रहे थे, तब अग्निवेशने उनसे पूछा :—महाराज! मनुष्यके जीवनकी कोई अवधि है या नहीं? भगवान् बोले :—अग्निवेश! इस संसारमें मनुष्योंकी आयु युक्तिके ऊपर निर्भर है। (अर्थात् जो जितनी सावधानीसे रहता है वह उतने ही ज्यादा दिन जी सकता है।')

यदि अनुवाद करते समय किसी शब्दका अर्थ न मालूम हो तो, वहाँका भाव समझ कर, उस शब्दका अर्थ लिख सकते हैं। बीचमें किसी शब्दको छोड़ना न चाहिये। अक्षरशः अनुवाद करना भी ठीक नहीं है।

प्रबन्ध-रचना।

सामान्यतः चार प्रकारके प्रबन्ध होते हैं:—(१) वर्णनात्मक, (२) कथात्मक, (३) व्याख्यात्मक और (४) आलोचनात्मक।

(१) वर्णनात्मक—जिसमें किसी देखी या सुनी वस्तुका वर्णन हो। जैसे—"कलकत्तेका अजायब घर", "सारनाथ" "नीमवृक्ष" "काशीकी सेवासमिति" इत्यादि।

(२) कथात्मक—जिसमें सामाजिक, पौराणिक आदि घटनाओं को या किसी पुरुषके जीवनचरित्रकी कथा लिखी जाय। जैसे,—"भारतमें मोगलराज्य", "शिवाजी", "सत्य हरिश्चन्द्र", "लोकमान्य बालगङ्गाधर तिलक", "अंग्रेजी राज्य" इत्यादि।

(३) व्याख्यात्मक—जिसमें किसी अदृश्य पदार्थकी व्याख्या हो। जैसे,—"परोपकार", "देशसेवा", "विद्यार्थिजीवन", "धर्म", "स्वास्थ्यरक्षा", और "स्वतन्त्रता" इत्यादि।

(४) आलोचनात्मक—जिसमें तर्क-वितर्क द्वारा विज्ञानानुसार कुछ आलोचना की गयी हो। जैसे,—"रेलसे लाभ या हानि", "भारतमें बालविवाह", "विद्यार्थी और ब्रह्मचर्य्य" इत्यादि।

प्रबन्ध लिखनेका नियम।

पहले पहल अभ्यासके लिये चाहिये कि, किसी पुस्तक या समाचारपत्रको पढ़कर उसका संक्षेप अपनी भाषामें लिखे और यह उसी समय ख्याल कर ले कि, इसमें इतने मुख्य विषय हैं, अतः इतने प्रकरण होंगे। इस तरह जब कोई निबन्ध लिखना हो तो, प्रथम उसके मुख्य विषयोंको नोट कर ले और उन्हींके आधार पर समय और लाइनका भी विचार कर ले। फिर, लिखना प्रारम्भ करे। उदाहरणार्थ कुछ नमूने यहाँ दिये जाते हैं।

१—गौ (वर्णनात्मक)।

यह सींगवाले पशुओंमें एक लम्बा चौड़ा सुडौल जन्तु है। इसके खुर फटे होते हैं। यह लाल, काला, सफ़ेद, चित्र आदि अनेक रङ्गोंका पशु है। इसका स्वभाव सरल होता है। इसका भोजन घास है। यह प्रायः सारे देशोंमें पाया जाता है। सामान्यतः इसके नरको बैल या साँड़ कहते हैं और मादाको गाय या धेनु कहते हैं। देश-भेदसे इसके आकारमें भी भेद होता है। यमुनापार, गुजरात, नेपाल आदि देशोंमें यह बड़े आकारमें पाया जाता है। इसका दूध अमृतके समान लाभकारी है। मूत्र और गोबरकी ऐसी खाद होती है कि, किसी चीजकी भी खाद उसकी बराबरी नहीं कर सकती। यह मनुष्यका, एक प्रकारसे, जीवन देनेवाला पशु है। इसीलिये इसे सभी मुल्कके मनुष्य पोसते-पालते हैं।

वैद्यकशास्त्र कहता है कि, दुनियामें ऐसी कोई चीज नहीं है, जिसमें शरीरके सब अंशोंको बढ़ानेकी शक्ति हो। क्योंकि किसीमें मांसबढ़ानेकी शक्ति है तो, किसीमें मेदा बढ़ानेकी, पर गायका दूध ही एक ऐसी वस्तु है, जिसमें शरीरकी सारी चीजोंको बढ़ानेकी शक्ति है। दूसरी कोई चीज न खा करके, केवल गायके दूध पर मनुष्य अपना जीवन बिता सकता है। भारतीयताकी दृष्टिसे देखा जायतो, इसकी महिमा बहुत अधिक मालूम होती है; क्योंकि, यहाँका सारा कारबार गौ पर ही निर्भर है······इत्यादि।

२—अभिमन्यु (कथात्मक)।

यह एक वीर बालक था। इसका जन्म प्रसिद्ध क्षत्रिय

वंशमें हुआ था। इनके पिता भारतके प्रसिद्ध वीर धनुर्धारी अर्जुन थे और इसकी माता भारतके राजनीतिज्ञोंमें अद्वितीय राजनीतिज्ञ भगवान् श्रीकृष्णकी 'बहन सुभद्रा थी। यह बालक जब गर्भमें था, तभी सुभद्राको अर्जुनने व्यूह-भेदन-कला सिखायी थी, जिससे बिना पढ़े ही इस लड़केमे व्यूह-भेदनकी विद्या आ गयी थी। अतः यह सिद्ध बात है कि, माता शिक्षिता हो तो, लड़केको जैसा चाहे, वैसा बना सकती है।

जब बालक अभिमन्युका ब्रह्मचर्य्याश्रममें प्रवेश हुआ, और वह क्षत्रियोचित शिक्षा पा रहा था, तब विराट्के यहाँ उसके पिता अर्जुन बृहन्नलाके रूपमे रहकर स्त्रियोंको गानविद्या सिखा रहे थे। इसी बोच विराट्के साथ दुर्योधनादि कौरवोंका संग्राम हुआ, जिसमे अर्जुनने सबका परास्त किया। इससे प्रसन्न होकर अपनी लड़का उत्तराको विराट्ने अर्जुनको देना चाहा; पर सभ्य-शिरोमणि भारतके वीर अर्जुनने उसे अपनी शिष्या समझकर लेनेसे इनकार किया। फलत अभिमन्युका ब्रह्मचर्य्य पूरा न होने पर भी कच्ची उम्रमें ही उत्तरा उसके गले मढ़ी गयी। यही कारण है कि वीर अभिमन्युकी, महाभारतके बीच, अकाल मृत्यु हुई।

जब महाभारत हो रहा था, तब सभी वीर अपनी २ वीरता दिखा रहे थे। हमारे चरितनायक किससे कम था कि, वह अपनी वीरतासे बाज आता! अन्तमें जब गुरु द्रोणने देखा कि, अर्जुन और श्रीकृष्ण दूसरी तरफ चले गये हैं, तब एकाएक

चक्रव्यूहकी रचना करके युधिष्ठिरसे कहा कि, "या तो इस व्यूह' को भेदन करो या दुर्योधनको विजयपत्र लिख दो।"

अब युधिष्ठिर बड़े घबड़ाये। वहीं वीर बालक अभिमन्यु खड़ा था। वह अपने चाचाकी यह विकलता देख चट व्यूहमें घुस पड़ा और सिंहके समान गर्जना करता हुआ तथा सेनाको चीरता हुआ अन्दर जा पहुँचा,। वहाँ द्रोण, कर्ण, दुर्योधन आदि सभी महारथियोंसे यह वीरकेसरी बालक अकेला ही लड़ा। अन्तमें इस वीरने विरथ हो, खड्ग लेकर युद्धभूमिमें पैतरा करते हुए जयद्रथके हाथसे वीरोचित गतिको प्राप्त किया! अहो! भारतके वीर नवजवानो! देखो इसप्रकार सदाके लिये वह अपने उज्ज्वल यशको भारतके भावी लालोंके लिये छोड़ गया।

३—स्वतन्त्रता (व्याख्यात्मक)।

यह मनुष्यमात्रका स्वाभाविक अधिकार है। इसीके लिये भारतवर्षमें क्या, सभी देशोंमें, सभी मनुष्य सर्वदा यत्न करते रहते हैं। नहीं, नहीं, मै भूलता हूँ, मनुष्यमात्र ही नहीं; प्रत्युत स्थावरसे लेकर जङ्गम तक इसके प्रेमी हैं। देखो, यदि कोई पौधा किसी पौधेके तले पड़ जाय तो, वह दबने लगता है, उसका विकास हो ही नहीं सकता। इसी कारण बागका बागवान उस पौधेको उठाकर दूसरी जगह लगाता है। वह बराबर यही देखा करता है कि, कोई पौधा किसी पौधेके तले न पड़ने पावे, नहीं तो वह दबकर कुम्हला जायगा। यही दशा

पशु-पक्षियोंमें भी है। जो पशु स्वतन्त्र विचरण करते हैं, वे कैसे हृष्ट-पुष्ट हैं। साँड़को ही देखिये! उसीका भाई, जो बँधा रहता है, कैसा दुःखी रहता है! ऐसे ही पक्षियोंको देखिये। इन्हें मनुष्य पकडकर कितने प्रेमसे रखते और उत्तमसे उत्तम खाद्य पदार्थ देते हैं; तो भी ये वैसे सुखी नहीं रहते, जैसे स्वतन्त्र विचरणमें सुखी रहते हैं। किसी कविने ठीक ही कहा है: —

"पराधीनता दुख महा, सुख जगमें स्वाधीन,
सुखी रहत शुक वन विषै, कनक पींजरे दीन।"

भारतवर्षमें तो, न जाने, कहाँसे कायरपनका भूत सवार हो गया है! सदियोंसे यह देश पराधीनताकी बेड़ीमें जकड़ा हुआ है। यहाँके दर्शनोंको देखिये तो, एक स्वरसे यही आवाज़ आ रही है कि, मनुष्यका अन्तिम ध्येय मुक्ति, (स्वतन्त्रता) है। धर्मशास्त्रोंको उठाइये तो।

"सर्वं परवशं दुःखं सर्वमात्मवशं सुखम्।
एतद्विद्यात्समासेन लक्षणं सुख-दुःखयोः॥"

ऐसे २ वाक्य डङ्केकी चोटसे स्वतन्त्रताकी घोषणा कर रहे हैं। जहाँ पर वेन जैसा अत्याचारी राजा, स्वतन्त्रताका अपहरण करनेसे ही, सिंहासनच्युत किया जाता है, जहाँ पर नित्य संध्यामें "अदीनाः स्याम शरदः शतम्" का पाठ पढ़ाया जाता है, वहीं पर आज स्वतन्त्रताका ऐसा अभाव! बाबाजी लोग कहते हैं,—"मुक्तिके लिये मैं यत्न करता हूँ, संसारसे मुझे क्या मतलब?" परन्तु उनके पाञ्चभौतिक शरीरमें, मनमें,

रग रगमें भीपण डर घुसा हुआ है। हा हन्त! इन महात्माओंके लिये भी स्वतन्त्रता आकाशकुसुमसी हो रही है!!

हाँ, अब हमारे देशमें इसकी लहर उमड़ी है; लोग जाग रहे हैं। अब लोकमान्यके स्वराज्य-बिगुलने सबकी निद्रा तोड़ दी है। आशा है, भारतमें भी कुछ ही दिनोंमें, स्वतन्त्रता देवीका वास होगा।

४—भारतमें बाल-विवाह (आलोचनात्मक)।

आज मुझे "भारतमें बाल-विवाह" शीर्षक लेख लिखनेको मिला है। यह ऐसा विषय है, जिसकी तरफ ख्याल जानेसे एक बार सिरमें चक्कर आ जाता है! आखें भर जाती हैं!! यह वही देश है, जहाँ कन्याएंपूर्ण शिक्षिता होकर वरको वरण करती थीं; आज उसी देशमें ऐसी कुरीति! इस पर भी धर्मशास्त्रोंके ढेरके ढेर वचन पेश किये जाते हैं और कहा जाता है कि, बाल विवाह धर्म्म-शास्त्रसम्मत है!! हाय रे देश! तू जल्दी रसातलमें क्यों नहीं चलाजाता!!

मनुष्यका वीर्य्य स्वभावतः २५ वर्ष पर परिपुष्ट होता है। उसके अन्दर उसका क्षय कर देना मनुष्यजीवनको विनष्ट करना है। साथ ही, सन्तानको भी उस अपुष्ट वीर्य्यसे पैदा करके, जीवन भरके लिये रोगी, आलसी, निरुद्यमी बनाकर छोड़ देना है। यही कारण है कि, आज हिन्दूजाति दिनोंदिन क्षीण होती जारही है। जब पेड़ोंमें भी छोटेपनसे फल लगने लगता है तब, माली उसे तोड़कर फेंक देते हैं और कहते हैं,—"हा! अभी फलने लगा!! जल्दी सूर्ख

जायगा, और फल भी छोटा हो जायगा।" पशुओंको बचपनमें जोड़े नहीं लगने दिया जाता। पर अफसोस! इस पवित्र संस्कारके लिये, यहाँ कुछ विचार ही नहीं! लड़का १० का है तो, लड़की २० वर्षकी। लड़का ५० का है तो लड़की १० वर्षकी। ऐसा अन्धेर! और दोहाई धर्मशास्त्रकी!! धर्मशास्त्रोंकी क्या दोहाई देते हो? तुम्हें आँखे नहीं? खेतमें बोनेके लिये बीज खरीदते हो तो, क्या नहीं देखते कि, बीज पुष्ट है कि, नहीं? फिर यहाँ धर्म्मशास्त्रकी दोहाई कैसी? धर्म्मशास्त्र क्या तुम्हें मनमाना करनेको कहता है? वह तो कहता है:—

"वेदानधीत्य वेदौ वा वेदं वापि यथाक्रमम्।
अविप्लुतब्रह्मचर्य्यो गृहस्थाश्रममाविशेत्॥"

(समस्त वेदोंको, असमर्थतामें दो को ही,—अन्ततः एकको पढ़कर और ब्रह्मचर्य्यको अक्षुण्ण रखकर विवाह करे)।

"स सन्धार्य्यः प्रयत्नेन स्वर्गमक्षयमिच्छता।
सुखञ्चेहेच्छता नूनं योऽधार्य्यो दुर्बलेन्द्रियैः।"

दुर्बलेन्द्रियोंका गृहस्थाश्रममें प्रवेश निषिद्ध है। २५ वर्ष पर ब्रह्मचर्य्य पूर्ण होता है। १०० वर्षकी आयुमें चार हिस्से करने पर चौथा हिस्सा २५ ही होता है। २५ वर्ष तक इन्द्रियाँ भी दुर्बल रहती हैं। अतः २५ के पहले विवाह निन्द्य है। सुश्रुताचार्य्य भी नगारा पीट रहे हैं,—

"ऊनषोडशवर्षायामप्राप्तः पञ्चविंशतिम्।
यद्याधत्ते पुमान् गर्भं कुक्षिस्थः स विपद्यते॥

जातो वा न चिरं जीवेज्जीवेद्वा दुर्बलेन्द्रियः ।
तस्मादत्यन्तबालायां गर्भाधानन्न कारयेत् ॥"

मतलब यह कि २५ वर्षसे कम पुरुष द्वारा १५ वर्षसे कम स्त्रीके गर्भसे जायमान सन्तति पहले तो, मातृगर्भमें ही विपत्तिमें रहते है, फिर यदि वहाँसे बची तो, अल्पायु होती है। यदि कुछ दिन जी भी सकी तो, वीर्यहीन रहती है। इसलिये कभी भी बाल्यकालमें गर्भाधान संस्कार नहीं होना चाहिये। हमारे प्रिय मित्र द्विजेन्द्रजीने ठीक कहा है:—

विधि-विधान करते नहीं; दम्पति गर्भाधान।
चिरजीवी, सुन्दर सुघी, कैसे हों सन्तान॥

इससे भी बाल विवाह बुरा सिद्ध होता है। अतः देश, समाज और जातिकी भलाईकी दृष्टिसे भारतमें 'बाल-विवाह' जहाँतक हो सके, अतिशीघ्र उठा देना चाहिये।

"यद्ददासि यदश्नासि यज्जुहोषि करोषि यत्।
यत्तपस्यसि कौन्तेय ! तत्कुरुष्व मदर्पणम् ॥"

इस भगवद्वाक्यके अनुसार मैं अपनी इस लघुकृति हिन्दी-दीपिकाको जगतके ज्ञानमय सूत्रात्माके लिये समर्पण करता हुआ विश्राम लेता हूँ।

...शब्दमयं ब्रह्म वाक्ये सम्यक् प्रयोगतः
...प्रसादेन वाग्देवीं तामुपास्महे।

॥ इति शम् ॥